UNIVERSAL
LIBRARY
OU_186530
UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 840 B57B   Accession No. P.G.H 6377

Author भट्ट बालकृष्ण

Title भट्ट निबन्ध माला 1963

This book should be returned on or before the date last marked below.

प्रकीर्णक पुस्तकमाला

भट्ट निबंधमाला

पहला भाग

स्वर्गीय पंडित बालकृष्ण जी भट्ट के
सुंदर निबंधों का संग्रह

संपादक
श्री धनंजय भट्ट 'सरल'

सं० २०३० वि०
नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

63

प्रकाशक : नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

मुद्रक : शंभुनाथ वाजपेयी, नागरी मुद्रण, वाराणसी

द्वितीय : संस्करण, ११००

संवत् : २०३०

मूल्य : १५.५०

जीवनी

स्वर्गीय पं० बालकृष्ण भट्ट खड़ी बोली हिंदी के जन्मदाताओं में हैं। भट्ट जी भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र के समकालीन थे और उन इने-गिने साहित्यकारों में थे जिन्होंने हिंदी की सेवा में अपना सब कुछ समर्पित कर दिया।

पंडित बालकृष्ण भट्ट का जन्म ३ जून सन् १८४४ ई० को प्रयाग के एक प्रतिष्ठित मालवीय घराने में हुआ था। वह संस्कृत के बहुत बड़े विद्वान थे फिर भी मातृभाषा हिंदी की ओर उनका अनन्य प्रेम था।

सन् १८७० ई० के लगभग भट्ट जी ने हिंदी में लिखना शुरू किया। उन दिनों भारतेदु बाबू हरिश्चंद्र की बड़ी धूम थी। भट्ट जी ने जो पहला लेख लिखा उसका शीर्षक 'कलिराज की सभा' था। उसे उन्होंने भारतेंदु जी के 'कविवचन-सुधा' में छपने के लिए भेजा। भारतेंदु जी ने उसे बहुत ही पसंद किया। इसके बाद 'रेल का विकट खेल' 'स्वर्ग में सबजेक्ट कमेटी 'इत्यादि उनके कई लेख 'कविवचन सुधा' में निकले। उन सभी लेखों की खूब प्रशंसा हुई। इसके बाद उनके लेख 'काशी-पत्रिका,' 'बिहार-बन्धु' आदि मे भी निकलने लगे।

सन् हिन्दी १८७७ ई० में उन्होंने हिंदी की उन्नति के लिए प्रयाग में 'हिंदी-प्रवर्द्धनी' नाम की सभा स्थापित की। सितंबर १८७७ ई० से उन्होंने 'हिन्दी-प्रदीप' नामक मासिक पत्र निकालना

शुरू किया। 'हिंदी - प्रदीप' का मोटो यह था जिसे भारतेंदु जी ने लिखा था :—

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनँद भरै।
बचि दुसह दुरजन वायु सों मणिदीप सम थिर नहिं टरै।
सूझै विवेक विचार उन्नति, कुमति सब यामें जरै।
'हिन्दी-प्रदीप' प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै॥

इस 'प्रदीप' में प्राचीन कवियो के जीवनचरित, श्रीमद्भागवत, बाराही-सहिता, गीता और सप्तशती आदि प्राचीन पुस्तको की समालोचनाये, प्राचीन देश, नगर, नदी, पर्वत आदि का खोजपूर्ण वर्णन और नाटक, उपन्यास, निबंध आदि अनेक उपयोगी विषयो पर लेख लिख-लिखकर उन्होने खूब छापे।

'हिंदी-प्रदीप' के अधिकाश लेख भट्ट जी के ही होते थे। हिंदी-प्रदीप' शुद्ध हिंदी की ज्योति से सदा जगमगाता रहता था। अन्य भाषाओ के उच्छिष्ट लेखो की सहायता से उसमे कभी कोई लेख नही छपा। 'हिंदी-प्रदीप' की भाषा भट्ट जी की अपनी भाषा रहा करती थी। उनकी भाषा की व्यग मयी छटा उन्ही की अपनी प्रवृत्ति और सम्पत्ति थी। जब कि एक ओर उनकी भाषा मे संस्कृत और ब्रजभाषा के सुदर से सुदर शब्द, वाक्य और मुहावरे भरे रहते थे। दूसरी तरफ उन्हे उर्दू, फारसी या अग्रेजी तक के खपते और फबते हुए लबे से लम्ब टुकड़ो से भी परहेज न था। मालूम होता है उनकी कसौटी केवल एक पारखी जड़िये की सी कसौटी थी या एक चतुर पाकशास्त्र विशेषज्ञ की सी जिसके कारण जितना 'रस' साहित्यिको को आज तक भट्ट जी की भाषा में मिलता है उतना उसके बाद के किसी लेखक की भाषा में मिलना कठिन है।

जिस तरह भट्ट जी की भाषा उन्ही की अपनी भाषा थी। उसी तरह उनके लेख भी हमेशा नए से नए उन्ही के विचारों की उपज रहते थे, किसी की छाया या अनुवाद नही। वह जो कुछ लिखते थे अपने दिमाग से लिखते थे। यही उनके लिखने की खूबी थी। इसी का आदर्श उन्होंने दूसरो के सामने रखा। विचार स्वातत्र्य की उनके लेखो में यह हालत थी कि जिस अनुपम निर्भीकता से उस जमाने मे अगरेजी सरकार के कार्यो की आलोचना करते थे उसी निर्भीकता से धार्मिक रूढियो और सामाजिक कुरीतियो का खंडन करते थे।

वह अपनी समझ के अनुसार जो उचित और न्याय समझते थे वही लिखते थे। कभी किसी मत, सप्रदाय या पार्टी के कायल न होते थे। जिस बात से देश और जाति की उन्नति होने की बात देखते वही उनका मत हो जाता और उसी को धर्म कहते थे। यह बात उनके 'हिंदी प्रदीप' के एक एक लेख मे पाई जाती है।

'हिंदी प्रदीप' के उद्देश्य के सबध मे पंडित श्रीधर पाठक ने यह पद्य लिखा था जो पचास बरस का पुराना है —

'श्री हरिपद रज कृपा देश दुर्दशा सुधारन
हिंदू-गगन गुहा महातम तोम निवारन
दीन देश जन नेह नेह भरि भरि तहँ बारन
प्रबलित उर्दू-मुख कलित हिंदी उद्धारन
दीन प्रजा दुख हरन नागरी नगर प्रचारन
पर पद गत आरत भारत की आपद टारन
काव्य कला कौशल्य शिल्प विद्यादि उबारन
उत्तम उत्तम विषय देश भाषा सचारन

देश काल नियमानुसार मारग पग धारन
शत विधि निज उद्देश शेष लों पूरन कारन।'

'हिंदी-प्रदीप' तैंतीस साल तक लगातार निकलता रहा। अंत में सन् १९१० ई० में 'हिंदी-प्रदीप' कर्मयोगी प्रेस से प्रकाशित होता था। भट्ट जी के अनन्य भक्त और राजनीति के क्षेत्र में उनके साथ-साथ काम करने वाले कर्मवीर पं० सुंदर लाल जी 'कर्मयोगी' और 'हिंदी प्रदीप' दोनों के मुद्रक और प्रकाशक थे और 'कर्मयोगी' के साथ ही साथ भट्ट जी के एक निर्भीक लेख पर सरकार के भारी जमानत मांगे जाने के कारण 'हिंदी-प्रदीप' सदा के लिये बंद हो गया।

'हिंदी-प्रदीप' बंद होने के बाद उन्होंने कालाकाँकर से निकलने वाले 'सम्राट' नामक साप्ताहिक पत्र का कुछ दिन संपादन किया। फिर बाबू श्यामसुंदर दास जी ने काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'हिंदी-शब्दसागर' कोष के संपादन के लिये उन्हें बनारस बुला लिया। साल भर वहाँ काम करने के बाद बाबू श्यामसुन्दर दास जी जिनके सरक्षकता में कोष का काम होता था, जम्बू गये तो उनके साथ इन्हें भी जम्बू जाना पड़ा। वहाँ छ महीने काम करते हुए होंगे कि काठ की सीढ़ी से पैर फिसल जाने पर वे कूले के बल गिरे जिससे उनका कूला उखड़ गया। अशक्त हो जाने पर वे दिसंबर १९१३ ई० में प्रयाग लौट आए और यही १४ सितंबर १९१४ ई० को उनका स्वर्गवास हो गया।

भट्ट जी के संबंध में बहुत सी अनुपम बातें लिखने योग्य हैं। पर यहाँ स्थानाभाव से लिखने में असमर्थ है। यदि हिन्दी प्रेमियों की इच्छा हुई तो उनकी एक विस्तृत जीवनी लिख कर उनके सामने उपस्थित की जावेगी। अब पं० श्रीधर पाठक रचित एक छप्पय लिख कर उनकी जीवनी समाप्त की जाती है।

"जीवन तब अति धन्य सबहि विधि अहो पूज्यवर,
अनुदिन अनुकरनीय चरित पावन प्रशस्यतर।
धनि श्वदेश-सुचि-प्रेम नेम प्रिय प्रानहुँ सो पर,
सात्विक शुद्ध विचार सतत भारतोद्धार कर।
धनि 'हिन्दी प्रदीप' प्रकाशि जग मूरखता-तम-त्रास हर।
तव पुन्य नाम प्रिय भट्ट श्रीबालकृष्ण जग में अमर॥"

धनंजय भट्ट 'सरल'

वक्तव्य

निबंध साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग है। पर निबंध लिखने पर हिंदी में बहुत कम ध्यान दिया गया है। आज हिंदी की सर्वतोमुखी उन्नति के समय में उपन्यास-साहित्य बहुत आगे बढ़ चुका है। प्रसाद, लक्ष्मीनारायण मिश्र, गोविंददास जैसे लेखक अच्छे से अच्छे नाटक लिख चुके है। हरिऔध, मैथिलीशरण गुप्त, पत, प्रसाद, महादेवी वर्मा, और आचार्य रामचद्र शुक्ल की कृतियाँ काव्य और आलोचना साहित्य की उन्नति की द्योतक है। परतु निबध साहित्य मे महावीरप्रसाद द्विवेदी के कुछ निबधो को छोड़कर अच्छे निबधो का अभाव ही सा है—

हिदी मे निबध का लिखा जाना भारतेदु बाब हरिश्चंद्र के समय से शुरू हुआ और इसका श्रीगणेश स्वर्गीय पं० बालकृष्ण भट्ट ने किया। भट्ट जी ने भावात्मक और विचारात्मक दोनो तरह के निबधो का सृजन किया है। हिदी-गद्य मे पद्यात्मक ढग से लिखना आज नई बात समझी जाती है। भट्ट जी ने इस तरह के गद्य-काव्य का सबसे पहले आविर्भाव किया था। भट्ट जी हिदी के सबसे पहले निबध लेखक है फिर भी उनके निबधो मे रचना का प्रारभिक स्वरूप न मिलकर उसका सुसस्कृत रूप मिलता है। उनका हर निबध भाषा की सजीवता, रोचकता, और स्थान-स्थान पर सुदर मुहावरो की लड़ी से गुथा हुआ एक सुंदर गुलदस्ता मालूम होता है। उनका एक-एक निबध साहित्यिक सौरभ से युक्त है। उनके निबध के एक-एक शब्द में जो रस है, मौलिकता है, अनूठापन है, वह

अन्यत्र कहीं मिलना कठिन है । इन्हीं सब गुणों से भट्ट जी हिंदी साहित्य के एडीसन माने जाते है ।

भट्ट जी ने छोटे बडे सभी मिलाकर एक हजार से ऊपर निबंध लिखे हैं । इस तरह उन्होने हिंदी में निबध साहित्य की कमी को पूरा करने में पर्याप्त परिश्रम किया है । उनके प्रायः सभी निबंध ३३ साल तक लगातार निकलने वाले हिंदी प्रदीप के हर अक में स्थान-स्थान पर जगमगा रहे हैं । ये निबंध अभी तक पुस्तकाकार नही छपे हैं और 'हिंदी - प्रदीप' की प्रतियाँ भी अप्राप्य हो गई है । अब उनके निबंध को पुस्तक रूप में संकलित करने का प्रयत्न किया गया है । उनके कुछ निबंधों का संग्रह "भट्ट निबंधावली" के नाम से दो भागों में हिंदी साहित्य संमेलन से प्रकाशित हुआ है । इसके पहले उनके निबंधों का एक संग्रह 'साहित्य - सुमन' भी प्रकाशित हो चुका है । 'साहित्य - सुमन' इतने अधिक स्थानों मे पाठ्य-पुस्तक स्वीकृत हुआ और उसके इतने अधिक सस्करण निकले जितने इस प्रकार के किसी दूसरे सग्रह के शायद ही हुए हों । अब भट्ट जी के कुछ भावात्मक निबंधों का यह चौथा संग्रह 'भट्ट-निबंध-माला' के नाम से प्रकाशित किया जाता है । इसमें कुल ३२ निबंध उच्चकोटि के संग्रह किये गए है । प्रत्येक निबंध के नीचे उसकी रचना का समय भी दे दिया गया है ।

आशा है हिंदी ससार इस संग्रह का भी उसी तरह स्वागत करेगा ।

अहियापुर, प्रयाग
ता० ३१ अगस्त, १९४७

धनंजय भट्ट 'सरल'

निबंध सूची

संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
१	देवताओं से हमारी बातचीत	१
२	त्रिदेव कल्पना	४
३	स्त्रियाँ	११
४	पत्नीस्तव	१६
५	बधूस्तव राज	२२
६	कार्तिक-स्नान	२५
७	रूपवानों में रूप का रहस्य	२६
८	जवानी की उमंगें	३३
९	कौआपरी और आशिकतन	३८
१०	रुचना या पसंद	४१
११	सुगृहिणी	४६
१२	चली सो चली	५१
१३	चलन	५५
१४	चलन की गुलामी	६१
१५	रसाभास	७०
१६	हिंदुस्तान के रईस	७३
१७	दरिद्र की गृहस्थी	७६
१८	एक अनोखा स्वप्न	८१
१९	नई सभ्यता की बानगी	८७
२०	दंभाख्यान	९१
२१	एक अशरफी का आत्मवृत्तांत	९५
२२	वकील	१०१

संख्या	विषय			पृष्ठ सख्या
२३	अकिल अजीरन रोग	—	—	१०४
२४	इंगलिश पढ़ि सो बाबू होय	—	—	१०८
२५	नहीं	—	—	१११
२६	बिना भाव	—	—	११४
२७	कतिकी का नहान	—	—	११७
२८	एक इंग्लिसाइज्ड् नए मित्र से मुलाकात		—	१२१
२९	हाकिम और उनकी हिकमत	—	—	१२७
३०	पच्च महाराज और मिडिल क्लास की परीक्षा			१३२
३१	हमारे गुदडी के लाल	—	—	१३५
३२	कट्टर सूम की एक नकल	—	—	१४०

(१) देवताओं से हमारी बातचीत

आज अर्द्धोदय महोदय महापर्व है बड़े से बड़ा कुम्भ आ उपस्थित हुआ है। काश्मीर से कन्याकुमारी तक और कलकत्ता से पेशावर तक के लोग इस माघ मेले में आए हैं। न जाने कहाँ कहाँ के सन्त, महन्त, साधु, विरक्त, खाकी, वैरागी, नागे, निर्मले स्वर्गद्वार का सीधा रास्ता दिखलाने को यहाँ प्रयाग में आये हुए हैं।

आज श्री गंगा जी में गोता लगाते ही वैकुण्ठ अवश्य मिलेगा इन्हीं सब बातों को सोच-विचार न जाने कहाँ की शामत सवार हुई कि मुझे भी गंगा-स्नान की श्रद्धा चर्राई। कुछ तो सामत सवार हुई कुछ मैंने यह भी सोचा कि आज के दिन थोड़ा सा क्लेश उठाने मात्र ही से जो जन समाज में मैं भी श्रेष्ठ हिन्दू समझा जा सकता हूँ और नास्तिक तथा क्रिस्तान कहलाने से बचता हूँ तो क्यों न उस थोड़े से क्लेश को गँवारा करें। भीतर मेरे चाहे जो हो पर कुटिल कपटी जाहिरदारों में आदर पाने लायक रहूँगा। यही सब सोच समझ चार बजे तड़के ही घर से चल निकला। उधर शीत भी वह सुरखी पकड़े हुई थी कि पग पग में छट्ठी का दूध याद आता था बूट और मोजा कसे हुए था पर तो भी कदम-कदम पर यही बोध होता था मानो केदारनाथ के हेवार में गलने को जा रहा हूँ। सर्राटे की हवा कान को बेंधे डालती थी कलेजा काँपता था। खैर, ज्यो त्यों गंगा तट पर पहुँचे। उधर सूर्य नारायण का आधा बिम्ब सान पर चढ़े शुद्ध मानिक समान रक्त या यों कहिये रेल की इञ्जिन के आगे वाली लालटेन के माफिक अपनी किरन की बढ़नी से रात के अन्धकार से मैले

आसमान को बटोरता पृथ्वी के नीचे से निकलता हुआ देख पड़ा। मुझे माघ माहात्म्य का यह श्लोक याद आया—

माघेमासि रटन्त्याप: किञ्चिदभ्युदिते रवौ।
ब्रह्मघ्नं वा सुरापं वा कम्पतन्तं पुनीमहे ॥

मैंने सोचा तब यही तो समय पुण्य लूटने का है। चट्ट कपड़ा उतार गंगा के ठिठरते पानी में कूद पड़ा। कूदने के पहिले तक की तो मुझे बखूबी होश है उपरान्त फिर मै नही जानता कि मुझे क्या हुआ और मैं कहाँ हूँ। मैं नही समझता इसे बेहोशी कहूँ या स्वप्न कहूँ या उसी तरह की एक 'विजन' कहूँ जैसा मूसा को सीनियाई पहाड़ पर हुई थी। अस्तु,

मुझे ऐसा मालूम हुआ कि पृथ्वी से आकाश-गोलक तक बे-ओर-छोर लम्बी लाखो - करोड़ों डंडों की एक सीढ़ी लगी हुई है, जिस पर से लाखों - करोड़ो देवयोनि कोई श्यामवरण चतुर्भुज, आकण्ठ - लम्बिनी बनमाला और पीतपट पहने किरीट-मुकुट धरे कोई कर्पूर पुरोज्ज्वल शरीर सर्वाङ्ग भस्मोद्धूलित त्रिनेत्र अक्ष और स्फटिक की माला कण्ठ से पाँव तक धारण किये सिर पर जटा और भालपट्ट मे चन्द्रमा से सुशोभित था। कोई ऊपर से उतरते हुए कोई नीचे मे ऊपर को चढ़ते हुए देख पड़े। उन्ही में के कई एक मेरी ओर झुक पड़े और ज्योंही मेरा हाथ पकडना चाहा त्यों ही हाथ का इशारा कर मैं बोला—ठहरो, ठहरो, आप मुझे कहाँ ले जाइएगा? वहाँ पहुँच मुझे कहाँ जाना पड़ेगा? कैसे रहना होगा; वहाँ की रहन-सहन नशिस्त बरखास्त का क्या क़ायदा है? कैसे लोग मेरे साथी और पासी-पड़ोसी होगे? क्या वहाँ रेल नही है कि उसी पर बैठाय आप चट्ट मुझे वहाँ पहुँचा दें। इस सैकड़ों कोस की लम्बी सीढी चढते चढ़ते तो मैं थक जाऊँगा पाँव दुखने लगेंगे। सनातन धर्म और आर्यसमाज का झगड़ा सुनते - सुनते मेरा कान फूट

गया। क्या वहाँ भी तो मुझे यही न सुनना पड़ेगा ! बेशरमी और बेहयाई के खान ये नागे क्या ऐसा ही वहाँ भी मेरे नेत्रों को क्लेश पहुँचावेंगे और कुढ़ावेंगे। और मुझे याद नहीं मैंने क्या-क्या बातें उनसे पूछीं ! वे देवयोनि मेरी यह बात सुन अचरज में आए और आपस में कहने लगे मनुष्य कोटि में यह तो कोई अद्भुत पुरुष देख पड़ा। जिस स्वर्ग के लिये लोग ललचाते है कठिन तपस्या अनेक नियम, व्रत, दान, तीर्थ करते हैं वहाँ जाने से यह आगा–पीछा कर रहा है। उनमें से एक जो उनकी फौज का अध्यक्ष था बोला —नहीं नही ये सब बातें तुम वहाँ एक भी न पावोगे। तुम कहो तो पहले मैं उन्ही का दृश्य दिखला कर तब मैं तुम्हें उस विमल स्थान में ले चलूँ जहाँ ले जाने के लिये मैं नियत किया गया हूँ। तुम समझते हो इसी तरह की सीढ़ी उन कुमार्गियों के लिये भी तैयार की गई है जो विवेक को मन में बिना स्थान दिये अन्ध-परम्परा के सूत्र के भरोसे गंगा में केवल चूतर बोर लेने ही से स्वर्ग का सीधा मार्ग समझते हैं।

इतने में सूर्य देव की गरम-गरम किरणें मेरे अङ्ग-प्रत्यङ्ग में शीत मे डूबे मरणासन्न को चन्द्रोदय के समान बेधने लगी। गंगा के ठिठरते पानी का असर जाता रहा होश आया देखा तो न वह लम्बी सीढ़ी है न देवदूत है। भेंड़िया धसान का हुल्लड़, अलबत्ता चारो ओर मच रहा है।

"मनः पूतं समाचरेत्"
शुचिमनो यद्यस्ति तीर्थेन किम्"

इत्यादि, वाक्यों के गम्भीर अर्थ को सोचता हुआ मैंने भी अपने घर की राह ली !

अक्टूबर १८९३

(२) त्रिदेव कल्पना

हमारे देश के एक प्राचीन पण्डित जो कुछ दिन पूर्व संसार से अन्तर्धान हो गए एक अद्भु युक्ति से त्रिदेव कल्पना करते थे। उनका कथन जहाँ तक हमें स्मरण है वह अपने रसिक पाठकों के अवलोकनार्थ यहाँ प्रकाश करते है।

उक्त पण्डित जी का कथन था कि ब्रह्मा. विष्णु रुद्र ये तीनों देवता सदैव संसार में प्रत्यक्ष रहते है; मनुष्य के नित्य नैमित्तिक बर्ताव और व्यवहार में काम आते है और उन्ही की दयादृष्टि से मानुषी सृष्टि का निर्वाह होता है। वे कहते थे कि मर्यादा-परि-पाटी-स्थापक जाति आदि के विभागकारी प्रथम देव ब्रह्मा है और सब के प्रतिपालक सत्वगुणाधिकारी राजा प्रजा के मित्र विष्णु है और तेजस्वियो में सब से बड़े सब के राजा और सहारकारी सकल शक्तिसम्पन्न भगवान रुद्र हैं।

उक्त पण्डित जी कपास को ब्रह्मा बतलाते थे कि इसके चारों टेर जिससे रूई निकलती है ब्रह्मा के चारों मुख हैं। उसी रूई से तीनों गुण अर्थात् तागे निकलते हैं। श्वेत तागा सत्व गुण है लाल रंग में रंग जाने से रजो गुण और काले रंग से तमोगुण के तागे होते है। ब्रह्मा सृष्टि की मर्यादा के नियामक हैं। जिन्हें कुछ भी मानुषी ज्ञान प्राप्त हुआ है वे कपड़ा पहनने लगे है। बनमानुषों में अभी तक नग्नता देखी जाती है। ब्रह्मा का नाम पितामह (बाबा पुरखा पुरनिया) इसी लिये है कि वे अपने बाल-बच्चों को वस्त्र से ढाँपे रहते हैं। सब लोगों में यह गाथा प्रसिद्ध है कि मनुष्य जाति को ब्रह्मा ने पृथक पृथक वर्ण और जाति में विभक्त किया है सो वह बात कपास ही के गुण अर्थात् तागों में है कि उससे सब प्रकार के

कपड़े बनते हैं जिनके पहनने से पृथक पृथक वर्ण और समुदाय की पहिचान होती है जिसके गले में यज्ञसूत्र (जनेऊ) डाल दो लम्बी ढीली ढाली बनारसी धोती पहना दो वह उसी समय चाहे जो हो ब्राह्मण ही प्रतीत होगा। ऐसे ही वीर पुरुष की-सी कछनी और टेढ़ी बाँकी पगड़ी आदि से सजे बजे लोग चाहे जो हों क्षत्री प्रतीत होते हैं। इसी प्रकार अपने अपने अनुकूल वस्त्र के आच्छादन से वैश्य शूद्र तथा इतर देश-देशान्तर वासी विलायती लोग प्रतीत होते हैं। यहाँ तक कि एक अच्छे कुलीन शौचाचार सम्पन्न यम नियम व्रतधारी द्विजाति को भी कोट पतलून पहिना अङ्गरेजी टोपी सिर पर रख दो तुरन्त अङ्गरेजी बाजावाला तंबूर्ची या मटियाफूस साहेब जँचने लगेगा जैसे कि नाटकों के अभिनय में वस्त्रादि के परिवर्तन से अनेक स्वाँग दिखलाए जाते हैं।

उक्त पण्डित जी विष्णु भगवान अन्न को कहते थे और यह प्रमाण देते थे—

"अन्नं ब्रह्ममयो विष्णुर्भोक्ता देवो महेश्वरः"

और यह ध्यान पढ़ते थे

"शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानिगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्"

भगवान अन्न का आकार शान्त है क्योंकि जब भूख से पेट खाँव खाँव करने लगता है उस समय अन्न के पेट में जाते ही अद्भुत शान्ति और प्रसन्नता प्राप्त होती है। 'भुजगशयन्' अन्न देव खेत और खत्तों में सर्प के समान महीनों और वर्षों तक पड़े पड़े शयन करते हैं जब तक दुर्भिक्ष मनाने वाले बनिये उन्हें न जगावें। पद्मनाभं अर्थात् कोटहान कोट है नाभि मध्य भाग जिसका—'सुरेश' देवताओं के स्वामी हैं—विश्वाधारं' अन्न

ही के आधार से संसार रथ बना हुआ है—'गगन सदृशं'' शून्य है तुलना जिसकी अर्थात् जगत में इनके समान कोई नहीं है 'मेघवर्णं शुभाङ्गं' अर्थात् मेघ के समान नीला और अच्छा रंग होता है जिनके पेड़ और पत्तों का। 'लक्ष्मी' अर्थात् शोभा के कान्त हैं बिना अन्न पेट में गए भाँति भाँति की बनावट सजावट सब फीकी मालूम पड़ती है। कमल नाम जल का भी है सोई है नेत्र जिनका बड़े बड़े योगियों का भी ध्यान अन्न की ओर रहता है ऐसे विष्णु 'व्यापक' अन्न भगवान सबके भय को मिटाते हैं. और सर्वलोक अर्थात् हिन्दुस्तान, इङ्गलिस्तान, अमेरिका आदि देशों में एक ही नाथ प्रभु हैं। जिस देश में एक साल भी अन्न नही होता वहाँ की प्रजा अनाथ की भाँति बिलबिलाती फिरती है और जब कभी प्रजापीड़ा होती है तो यही अन्न भगवान उसे निवृत करते हैं। इसी से जयदेव कवि ने अपने गीतगोविन्द में अन्न रूप भगवान विष्णु की बड़ी प्रशंसा लिखी है—

वेदानुद्धरते जगन्निवहते भूगोलमुद्बिभ्रते,
दैत्यं दारयते बलिं छलयते क्षत्रक्षयं कुर्वते।
पौलस्त्यञ्जयते हलं कलयते कारुण्यमातन्वते,
म्लेच्छान्मूर्छयते दशाकृतिकृते कृष्णाय तुभ्यं नमः'।

बड़े भयानक समयों में ऋषियों को उञ्छवृत्ति के द्वारा भगवान अन्न प्राप्त हो उनकी सहायता से वेदो का उद्धार करते हैं। जिस देश में अन्न देव दृढ़ रूप से रहते हैं उस देश को दुर्भिक्ष की आपत्ति से बचाते हैं जैसे कच्छप अपने अधोभाग में स्थित जलजन्तुओं को बचाता है। पूर्वकाल में अन्न भगवान ने इस प्रकार की कच्छपी-वृत्ति से प्रजा को बचाया था इसी से कूर्मावतार की समता अन्न में आती है। जब कोई राजा 'हिरण्य' सोने का लालची हो अन्न देव की भक्ति से बिमुख हो केवल 'हिरण्य' सोने ही पर दृष्टि रखता है प्रजा का कल्याणकारी अन्न की वृद्धि में विघातक होता है उसका नाम हिरण्याक्ष होता

है, अर्थात् 'हिरण्य' केवल सोने पर अक्षि-दृष्टि रखने वाला उस समय अन्न देव वाराह के समान उक्त लालची राजा पर चोट करते हैं और पृथ्वी को उबार लेते हैं। दूसरे हिरण्य "काश्पु" तकिया या सहारा को कहते हैं अर्थात् जो राजा प्रजा के सुख दुख की सहानुभूति न रख टैक्स पर टैक्स लगा कर केवल सोना ही बटोरने के लिये राज्य करते हैं उनको नरसिंह अर्थात् सभ्यता और हिंसकता दोनो गुण युक्त होकर अपनी अन्नाश्रिता प्रजा रूपी प्रह्लाद की रक्षा करते है। 'बलि छलयते' जब किसी राजा का बलि अर्थात् राज प्राप्य भाग अत्यन्त बढ़ कर सकल सृष्टि के भाग को अपने पेट में डालकर स्वयं शतक्रतु बना चाहता है उस समय अन्न देव अप्रसन्न हो उपेन्द्र वामन की पदवी को धारण कर उस उपद्रवी राजा को छलते है। अपना अङ्ग सङ्कुचित कर महँगी और काल के द्वारा प्रजा से प्राप्य राज कर में हानि डाल देते हैं।

"क्षत्रक्षयं कुर्वते"

जब राज पक्ष से अन्न भगवान की कृषिपद्धति छिन्न भिन्न हो जाती है उत्तम-उत्तम गेहूँ आदि सुस्वादु अन्न राजपक्ष से खिंच जाता है प्रजा निर्बल और अस्त्र शस्त्रहीन कर दी जाती है चोर उचक्के अथवा हिंसक जङ्गली जन्तुओं से सताई जाती हैं उस समय अन्न देव परशुराम का विग्रह धारण करते हैं।

"पौलस्त्यं जयते"

जब कोई क्रोधी कामी राजा रावण अर्थात् प्रजा का रुलाने वाला बनता है और सीता अर्थात् खेती की लाङ्गल पद्धति या हल रेखा को अफीम और नील आदि की खेती से स्ववश या कैद में डाल कृषि को कर्षित और कृश (दुर्बल) कर देता है उस समय अन्न भगवान सीता अर्थात् कृषिपद्धति की मुक्ति के लिये रावण (रुलाने वाले) राजा और उसके साथ कृषि साहित्य

विनाशियों को दण्ड दे फल फूल भोजियों की सहायता से अपनी कृषिपद्धति रेखा को स्वतंत्र कर सम्पूर्ण प्रजा के चित्त मे रम जाते हैं उस अवस्था मे अन्न देव का नाम राम होता है। हल द्वारा कृषि का सब कार्य होता है तब हली बलदेव जी अन्न को कहना ही उचित है। अन्न भगवान अपनी रक्षा से सृष्टि की पूर्ण रक्षा समझ दया का विस्तार करते है और जीव हिंसा को रोकते हैं। उस समय बुद्धि के अनुकूल काम करने से बौद्ध कहलाते हैं पर जब उनका कहा कोई नही मानता; अन्न विष्णु की लक्ष्मी मानुषी सृष्टि की परम उपकारिणी गौओ का संहार अधिक बढ़ जाता है अन्नदेव गुप्त हो जाते है, दैवी शक्ति से समुत्पन्न क्षुधा रूप विकराल तलवार समस्त गौभक्षियों का संहार कर देती है तब अन्न देवका नाम 'कल्की' पड़ता है ऐसे दशावतारी कृष्ण के लिये नमस्कार है।

अब रजत रुद्र भगवान का वर्णन सुनिए। जो जगत के राजा है जिनकी प्यारी शक्ति का नाम 'सुवर्ण' है रजत रुद्र और अन्न विष्णु से बड़ी मैत्री है।

"माधवोमाधवाधीशौ मे परस्पर हितैषिणौ"

रजत रुद्रोपासकों के घर अन्न विष्णु और अन्न विष्णूपासकों के यहाँ रजत रुद्र निवास करते है, जिनके ध्यान का यह श्लोक है—

"शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजं
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये"

सफेदी रूपी वस्त्र को धारण किये विष्णु अर्थात् सब जगह व्यापक पूर्णमासी के चन्द्रमा समान गोल-गोल और चतुर लोग जिन्हें काम में ला सकते हैं जिनकी प्राप्ति से मुख प्रसन्न हो जाता है जिनके प्रभाव से सब विघ्न दूर हो जाते हैं ऐसे रूप चन्द्र का मैं ध्यान करता हूँ। जब रुद्र भगवान वृषभ पर चढ़ कर चलते हैं

तो उनके साथ साथ अनेक रुद्र के गण श्याम ललित वस्त्र पहने हुए दुर्गा 'तलवार' ज्वालामुखी 'तुपक' महाकाली 'तोप' उनकी रक्षा करती रहती है जब रुद्र भगवान का विराट रूप बहुत बढ़ जाता है तो उनके उपासकों का प्रेम रुद्र की प्रधान शक्ति सुवर्ण में खिच जाता है।

"शैवात शाक्तो विशिष्यते"

उसी प्रधान शक्ति सुवर्ण की खींचाखीची में विलायत में एक्सचेंज बट्टा बढ़ जाने से भारतवर्ष के व्यापारियों का रुद्र देव संहार करते जाते हैं। ताम्रखंड डबल पैसा आदि छोटे छोटे रुद्र गण हैं और कौड़ियो का ढेर भूत-प्रेत पिशाचो का दल है जो सदा रुद्र महाराज के पीछे लगे रहते है। विष्णु अन्न को बदल कर रुद्र रजत और रजत रुद्र को बदल कर अन्न विष्णु मिल सकते हैं इसी से इन दोनों की उपासना मिली जुली पाई जाती है। लिखा भी है।

"शिवस्य हृदयं विष्णुर्विष्णोश्च हृदय शिवः"

अन्तर केवल इतना ही है कि रुद्र तमोगुणी पञ्चवक्त्र हैं। उनके उपासक तामसी, प्रबल और अभिमानी होते है और विष्णु अन्न के उपासक खेतिहर वे बेचारे शान्त शील दबे दबाये पड़े रहते है। विषम नेत्री रुद्र गणों के द्वारा उन पर अधिक अन्याय होने लगा है ऐसे समय में अब विष्णु अपने विराट वैभव को घटाते जाते हैं जो पहले अन्न का भाव था उसका आधा भी अब नहीं है यह लक्षण प्रजा के बड़े अभाग्य का है क्योंकि मनुष्य मात्र का जीवन अन्न की बृद्धि धेनु रूपा महालक्ष्मी के अधीन है। जैसा मन्त्र भी है--

"या लक्ष्मी सर्वभूतेषु लोकपालेषु संस्थिता।
धेनुरूपेण सा लक्ष्मी मम पापं व्यपोहतु"॥

इसमें कुछ सन्देह नहीं कि धेनुरूपा लक्ष्मी के हीन-दीन होने

के कारण अन्न भगवान जब सर्वथा अंतर्ध्यान हो जायँगे तो रजत रूपी रुद्र और सुवर्णा रुद्र शक्ति के उपासकों को भी बड़ी हानि होगी क्योंकि रुद्र भगवान विष्णु भगवान की सहायता और हृदयस्थ होने के बिना प्राण रक्षा की सामर्थ्य किसी की नहीं है इसलिये रुद्र गणों को उचित है कि अन्न भगवान और धेनुरूपा लक्ष्मी की पीड़ा पर विशेष ध्यान देकर जगत के कल्याण का उपाय सोचें। अभी सबेरा है :—

"गुणमूलं बलं पुसां।

जून १८८८

(३) स्त्रियाँ

स्त्रियाँ किसलिये हैं—हमारे शास्त्रों के अनुसार मर्द को सुख पहुँचाना इनका मुख्य काम है—न स्त्रीस्वातन्त्र्यमर्हति' मनु के इस वाक्य का भी यही प्रयोजन सिद्ध होता है। मर्द हर हालत में और तीनों पन मे स्त्रियो का मुहताज रहता है। बचपन से बुढ़ापे तक बिना इनके अपना काम न चलता देख मनु महाराज ने यह लिख दिया कि मर्द इनको अपने ताबे मे रख इनसे अपना काम निकाला करे ! स्त्री और पुरुष दो जाति के बीच जैसा परस्पर का बर्ताव है उससे हमारी ऊपर की बात कि स्त्रियाँ पुरुषों के सुख के लिये है अच्छी तरह स्पष्ट है। अलावे मुहब्बत के माता अपने पुत्र को पालना, रोग-दोख, घाम-छाह से बचाये रखना अपना मुख्य काम समझती है। बहन अपने भाई का—देवरानी अपने देवर का सब काम कर देना अपना धर्म मानती है। स्त्री अपने पति को आराम और हर्ष पहुँचाना अपने लिये सबसे श्रेष्ठ काम वरन् अपने जन्म की सफलता मानती ही है इसे कौन न स्वीकार करेगा।

किसी-किसी देश में जहाँ सभ्यता अपनी चरम सीमा को पहुँची है स्त्रियों को मरदो के बराबर का दावा है यहाँ तक कि अमेरिका में स्त्रियाँ फौज तक मे भरती है। इङ्गलैण्ड में कितनी स्त्रियाँ बैरिष्टर है किंतु हमारे यहाँ इसकी चलन नहीं है इसलिये स्त्रियों की दशा के परिवर्तन पर बहुत जोर देना व्यर्थ है। मकान की दुरुस्ती, लड़कों का आराम, रसोई इत्यादि कई एक काम इनके सिपुर्द किया गया है जिस घर में स्त्रियाँ सुशील और सुघर हैं वहाँ इन सब बातों का आराम है उस घर में जाते ही चित्त प्रसन्न होता है लिखा ही है :—

माता यस्य गृहे नास्ति पत्नी वा पतिदेवता ।
अरण्यं तेन गन्तव्यं यथारण्य तथा गृहम् ॥

सब सुख की खान माँ जिसके न हो अपना परम पूज्य देवता मानने वाली पतिव्रता पत्नी घर मे न हो उसे चाहिये घर त्याग बन को सिधारै क्योकि उसके लिये जैसा घर वैसा बन। सच है घर की स्त्रियाँ सुलक्षणा लक्ष्मी-रूप हुईं तो उस गृहस्थ की गृहस्थी के सुख के सामने स्वर्ग सुख भी अल्प है। वही फूहर और कर्कशा हुई तो घर क्या वरन् मुहल्ला और जाति भर को क्लेश और हानि पहुँचती है वह घर क्या वरन् नरक से भी बुरा है। चार में एक भी जहाँ इस ढङग की हुईं तो एक उस कर्कशा और चण्डी के कारण तीनों का सुलक्षण और सुघरपन सब खाक में मिल जाता है। प्राणी-प्राणी का जी ऊब उठता है। यही जी चाहता है घर छोड़ कहाँ भाग जायँ। घर से बन को अच्छा इसी दशा में कहा है--

स्मारं स्मारं स्वगृहचरितं दारुभूतो मुरारिः ।

इन कर्कशाओं का कुछ ढङग ही निराला है ये किस बात से प्रसन्न हैं और क्या चाहती हैं इसका भेद जानने में कदाचित उशना और वृहस्पति की बुद्धि भी थक कर गोठिल पड़ गई। सास से लड़ैं, ससुर से लड़ैं, ननद से लडैं मर्द मुआ तो इनका गुलाम ही ठहरा जेठ-जेठानी, देवर-देवरानी की कोई हकीकत ही नहीं, बहन-बहन लड़ैं, परोसी से राह चलने वालों से लड़ै, न कोई मिलै तो हवा से लडैं, जब तक पेट भर के न लड लें अन्न न पचै। शकल देखो तो भूतिन-सी मानो सब चुडैलों की अम्मा श्मशान से उठी चली आ रही है। चाल-ढाल, बोल - चाल किसी में जरा शऊर और सुघरपन का दखल नहीं, कसीफ और मैली ऐसी कि पास से निकल जाय तो दिमाग़ के रेजे रेजे उड़ने लगैं, घर में जाकर

देखिए तो भिन्न-भिनाहट और मैलेपन से ओकाई आने लगे।

देखिए ! अब उधर भी नजर फैलाइये—स्वरूप देखिये मानों साक्षात् लक्ष्मी। मुँह से बोल निकला मानों फूल झर रहा हो। अंग-अंग की सजावट कोमलता सलोनापन और सुकमारता से मन हरे लेती है। चाल-ढाल, रहन-सहन में कुलाङ्गनापन और भलमनसाहत बरस रही है। धन्य है उनका जीवन और महापुण्य-भूमि है वह घर जिसे असूर्यंपश्या ऐसी स्त्रियाँ सती सावित्री समान अपने पादन्यास से पवित्र करती हुई दीपक समान प्रकाश कर रही है—

"दृष्ट्या खञ्जनचातुरी मुखरुचा सौधाधरी माधुरी,।
वाचा किञ्च सुधासमुद्रलहरी लावण्यमामन्त्र्यते"

अन्यच्च

'गतागतकुतूहलं नयनयोरपांगावधि—
स्मितं कुलनतभुवामधर एव विश्राम्यतिः।
वचःप्रियतमश्रुतेरतिरेव कोपक्रमः।
कदाचिदपि चेत्तदा मनसि केवलं मज्जति"।

इनकी देहप्रभा सफाई लवनाई और निकाई देख किसका मन नही मोहता। इसी से स्त्रियाँ गृहस्थी की सार समझी गई हैं। सभ्य और शाइस्ता मुल्कों में जहाँ औरतें पढ़ी-लिखी है वहाँ इनमे सखुनआराई और गप्प कोई आश्चर्य नही वरन् हम लोगो के समाज मे भी जहाँ औरतो की हालत बड़ी लचर हो रही है पर बात करने में हजार मर्दों का कान काटे हुये है।

लोग कहते है औरतें बड़ी बातूनी होती हैं। हम कहते हैं केवल कहने ही में क्यों ? कौन सी ऐसी चीज है जिसमें औरतें मर्द से अधिक बढ़ी-चढ़ी नहीं है। जहाँ कही वे पढाई-लिखाई जाती हैं वहाँ स्त्रियाँ पुरुषों के ऊपर हो गई हैं। हमारे यहाँ के ग्रन्थकार और धर्मशास्त्र गढ़ने वालों की कुण्ठित बुद्धि में न जाने क्यों यही समाया हुआ था कि स्त्रियाँ केवल दोष की खान हैं गुण इनमें कुछ हई नही। इसी से चुन-चुन उन्हें जहाँ तक ढूं

मिला केवल दोष ही दोष इनके लिख गए और जहाँ तक इनके हक़ में बुराई और अत्याचार करते बना अपने भर सक न चूके और उन्हें हर तरह पर घटाया। कानून में इनका सब तरह का हक मार दिया, धर्म सम्बन्ध मे इन्हें प्रधान न रखा, दरजे में इन्हें और महा जघन्य शूद्रों को एक ही माना और किसकी कहैं मनु जिसके समान चोखा और हर एक समय में बरतने के पक्षपात-विहीन .शास्त्र-प्रणेताओ मे किसी दूसरे का धर्मशास्त्र ऐसा नही है उन्होने शूद्र और स्त्रियों की सब तरह पर रेढ़ मारी है। खैर, आर्यो के मुकाबले जो शूद्रों को घटाया सो तो उनकी पालिसी थी जेता और जित दोनो एक ही क्यो कर हो सकते है किंतु हमारी निपट ललनाओं का जो सब भाँत सत्यनाश किया इसे कौन न कहैगा कि उनके धर्मशास्त्र मे यह एक कलङ्क का टीका है !

अस्तु, हमारा पूर्वगत प्रस्ताव यह था कि स्त्रियाँ पुरुषो से सब तरह पर चढी बढी है यह बात बहुत ही मटीक और सच है। मुहब्बत और स्नेह जैसा इनमे है मर्दो के कट्टर कलेजे मे कभी समा ही नहीं सकता। धर्म और दया की तो ये मूर्ति होती है। हमारा हिन्दू धर्म जिसे सब लोग लचर कह कर धकिआये फिरते हैं इन अबलाओ ही की दया के सहारे से किञ्चित टिक रहा है। मुन्तजिम ऐसी कि टोडरमल की अकिल भी इनके इन्तजाम के आगे चक्कर मे आती है। पुरखिन पुरनिया स्त्रियो का उनके घर का इन्तजाम छोटी मोटी सल्तनत का नमूना है। सिवा इसके अब भी हम लोगो मे ऐसी-ऐसी बुद्धिमती चतुर सयानी स्त्रियाँ पड़ी हैं जो कोठी और इलाके का वरन् राज का भी सब काम सम्हाले है। लज्जा, धैर्य, सबर, सहिष्णुता, गमखोरी इत्यादि गुणो में जो ये एकता हुई तो कोई विशेष तारीफ की बात नही क्योंकि हया दया मया गम आदि स्त्रियो ही के गुण हैं। हम कहते है वीरता आदि बहुत से पौरुषेय गुण जिनमें

मर्द डींग मार-मार अपना दर्जा स्त्रियों के ऊपर कायम रखते हैं उनमें भी ये स्त्रियाँ कितनी आगे बढी हैं। चाँद सुल्ताना, अहिल्याबाई, वैजाबाई आदि जो पहले हो गई उन्हें कौन गिनावे। हाल में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई एक ऐसी हो गई कि बड़े - बड़े वीर-बाँकुरों से भी ऐसा कभी न हो सकता।

अपने सौन्दर्य को बढाना और अपने को दिखलाना इनमें स्वाभाविक होता है यह धर्म बुरा भला सबों में एकसा होता है। कुछ बुरे ख्याल से नही किन्तु यह स्वाभाविक धर्म इनका है। कोइला-सी काली कलूटा भी अपने को बन ठन एक बार तिलोत्तमा और उर्वशी को अपनी रूप की सजावट में दबाना चाहती है तब उनकी कौन कहे जो रूप गर्विता हैं। इत्यादि ललनाओं का गुणगान ऐसा सरस विषय है कि इसे जहाँ तक पल्लवित करते जायँ हमारे पाठकों का मन ललक-ललक कर पढ़ने से कभी न थकेगा।

हम सिद्ध कर चुके कि पुरुषो की कट्टर जाति की अपेक्षा निर्दोष और निष्पाप स्त्री-मात्र विशेष गौरव के योग्य हैं। अब हम यह दिखाया चाहते हैं कि अबलाओं मे भी हमारी भारत की ललना गुण गौरव में प्रथम और सर्व श्रेष्ठ हैं। अपना तन मन जलाकर और सर्वस्व सुख से हाथ धो कुल की मर्यादा का निर्वाह कर देना आर्य-कुल कामिनी ही जानती है। जो यूरोप की सुशिक्षित रमणी सौ बार जन्म लेकर भी नही कर सकती।

गोल्डस्मिथ अपने एक हास्य प्रधान लेख मे लिखते हैं---मैने एक बार कबरिस्तान की सैर करता हुआ एक कोने में जाकर देखा तो एक नौजवान सुन्दरी टटकी बनी हुई कबर पर कोमल कर कमलों से पंखा झल रही है मेरे जी मे इस समय अनेक भाव उदय हुए मन में कहने लगा सच्चा प्रेम इसी का नाम है। पास जा सलाम कर बोला निस्सन्देह आपका प्रेम ससार में एक उदाहरण होने योग्य है। परलोक में इस मृतक की आत्मा को न सन्तोष हुआ

होगा जिसके लिए आप अपने कर कमलों को इतना श्रम दे रही हैं। वह बोली इसके सन्तोष से मुझे अब क्या मिलेगा। अब यह फिर से जी सकता ही नही मुझे अपने सन्तोष की पड़ी है। समाज में प्रचलित रीति के अनुसार जब तक यह कबर न सूखेगी तब तक मैं अपने ऊपर से इस रण्डापे का बोझ नही टाल सकती। इसीलिये पंखा झल रही हूँ कि जितनी ही जल्द यह कबर सूखेगी उतना ही जल्द मेरा सुहाग फिर से जगेगा। मुझे इस सुन्दरी की बात सुन ताज्जुब हुआ। भीतर से तो इसकी व्यर्थ चेष्टा पर अत्यन्त क्रोध आया पर ऊपर से हँस कर उससे बिदा हो घर की राह ली।

यह किस्सा गोल्डस्मिथ की एक कल्पना मात्र है किन्तु इसमें कुछ भी सन्देह नही कि उनकी सभ्यता का धब्बा वहाँ स्त्रियो में स्वतन्त्रता इसी दरजे तक पहुँची हुई है जिसका चित्र गोल्डस्मिथ ने इस ढंग से उतार हँसी उड़ाया है। भारत-ललनाओ में बन्धकी और कुलटाये भी इतना साहस करने की हिम्मत न करेंगी जैसा वहाँ अच्छे अच्छे घरानो की कुलाङ्गनायें करती हैं। हमारी ललनाये पढ़ी लिखी नही होती पर शालीनता, धीरपन, सबर और सहन - शीलता में पृथ्वी भर की स्त्रियों के बीच एक उदाहरण हैं। पुरुषो में शुद्ध चरित्र और पवित्र आचरण ढूँढ़ा चाहो तो सौ में पचानवे अत्यन्त निकृष्ट और पतित पाये जायेंगे जिनके गुप्त या प्रकट चरित्र पर घिन होती है। वही इन आर्य-ललनाओं मे सौ मे कदाचित पाँच भी ऐसी हों वा न हो जिनके चरित्र को हम दूषित कहने का साहस कर सकेंगे और पचानबे ऐसी होंगी जो सौन्दर्य और सौभाग्य लक्ष्मी में साक्षात् शची सी होकर भी नवनता, भलपन साहस, सिधाई और सरल भाव में मानो भवानी की मूर्ति हैं। कुलीनता की नाक, लज्जा की खान, श्रद्धा, दया और शान्ति की मूर्ति,

घर की सर्वस्व संपति, हमारी गृहेश्वरी वामा जन भारत की इस गिरी दशा में भी कौम का जेवर और आर्य्य जाति का शृङ्गार हैं।

हम अपनी सती सच्चरित्र अबलाओं का जितना अभिमान करें सब थोड़ा है। विशेष कर ऐसी दशा में जब हम अपनी अशिक्षित कुलाङ्गनाओं का यूरोप की सुशिक्षित सभ्यता की सिरताज रमणी जनों के साथ मिलान करते हैं। साहब बहादुर हजार रुपया भी लावें तो मेम साहब के एक गौन में उड़ जाते देर न लगेगी। साहब एक-एक पैसे की किफायत करते है, मेम साहब को अपने फैशन की सजावट में सैकड़ों फूँक देते आह नहीं आती। साहब एक कोने में पड़े भिन-भिनाया करते है मेम साहब अपनी चञ्चलता और चुलबुलेपन के कारण बँगले को कूदती फिरती हैं। साहब मेम साहब की चरण सेवा में हरदम हाजिर रह कर भी जरा सा चूके कि उनकी खातिरशिकनी होते देर नहीं। वहीं हमारी स्त्रियाँ परकटा पखेरू की भाँति घर रूप पिञ्जरे में बन्द रूखा-सूखा भोजन और मोटा-झोटा कपड़ा मात्र से सतीत्व पालन करते बैठी रहती है। बाहर बाबू साहब अपने सुख और आराम के लिये सैकड़ों रुपये बहाय देते है; नई-नई कलियों के रस का स्वाद लेते डोलते फिरते है। पति-देवता हमारी गृहेश्वरियों को उनके पतित पति कभी धोखे से भी एक बार उन पर चितै दें तो इतने ही से निहाल हो जाती हैं। धन्य है इनके धैर्य और सबर को। देश की दुर्गति के बहुत से कारणों में स्त्रियों की ओर से मर्दों का निरपेक्ष होना भी एक कारण है। मनु महाराज लिख गए है।

जामयो यानि गेहानि शपन्त्यप्रतिपूजिताः।
तानिकृत्याहतानीव विनश्यन्ति समन्ततः॥

भली-भाँति आदर न पाय बहू लोग जिस घर को शाप देतीं हैं वह घराना कृत्याहत के समान सब ओर से नष्ट हो जाता है।

सच है असंख्य घराने इन्हीं स्त्रियों की निरपेक्षा के कारण निरवंशी हो गये कि कौड़ी-कौड़ी को मुहताज भूखों मर रहे हैं।

सचमुच ये कुलाङ्गना बधूजन लक्ष्मी का रूप होती हैं। अङ्गरेज़ जो इनकी खातिरदारी और हर तरह इन्हें प्रसन्न रखते हैं उसका फल प्रत्यक्ष देखा जाता है कि दिन-दिन उनकी श्री-वृद्धि चौगुनी होती जाती है। वहीं हम लोगो ने जो सब तरह पर इन्हें घटा दिया और दुर्गति में रक्खा उसका फल भी प्रत्यक्ष है। आर्य-ललनाओं की दशा का परिवर्तन हम तरक्की की पहली सीढ़ी कहेंगे और समाज-संशोधन तो कभी सम्भव नहीं कि इन्हें छोड़ हम कभी एक कदम भी आगे बढ़ सकें। स्त्रियाँ जो निरङ्कुश और स्वतन्त्र हुआ चाहें तो नदी समान कुलरूपी कगारे को एक दम में ढहाय दूर फेंक सकती हैं। यह उन्ही की कृपा और भलमनसाहत है जो भीतर-भीतर अपना कुलाङ्गनापन निभाती हुई हमें बाहर इस लायक बनाये हुए हैं कि कुलाभिमान में अग्रसर हो मोछा तरेर-तरेर बड़ कुलीन और इज्जतदार बनते हैं—दर्पदलन में क्षेमेन्द्र कवि ने इसी तात्पर्य को बड़ी लियाकत और कविता चातुरी के साथ प्रकट किया है।

कुलाभिमानः कस्तेषा जघन्यस्थानजन्मनाम्।
कुलकूलङ्कषा येषां जनन्यो निम्नगाः स्त्रियः।
कुलं कुलं कलयताम् मोहान्मिथ्याभिमानिनाम्।
लग्नः को यं न जानीमः लब्धग्रीवाग्रहग्रहैः।
धनयौवनसंपात दर्पकालुष्यविप्लवा।
केनोन्नतपरिभ्रष्टा वार्यन्ते निम्नगाः स्त्रियः॥

जुलाई १८९१

(४) पत्नीस्तव

हे महाराणी पत्नी तुम्हें नमस्कार है। तुम संसार का बन्धन महा जगड्वाल की मूलाधार हो। एक बार विवाह कर तुम्हारे जाल में फँस जाना चाहिये फिर क्या सामर्थि कि इस छन्दान को तोड़ कोई कहीं भाग सके। यह तुम्हारी ही कृपा है कि आदमी एक जोरू कर खुद संसार भर की जोरू आप बनता है। अति अल्प वय दस ही बारह वर्ष की उमर में तुम्हारे जाल में फँस जाने से हिन्दू जाति की कमजोरी, हीन-बल-क्षीण, वीर्य हीन-सत्व हो जाने का तुम्हीं मुख्य कारण हो। हम लोग अल्प बुद्धिवाले किस गिनती में हैं। त्रिकालज्ञ पाणिनि ऐसे महर्षियों ने भी तुम्हारी कदर की है "पत्युर्नो यज्ञ संयोगे" पति शब्द को नुक् का आगम हो यज्ञ के संयोग में। तात्पर्य यह कि धर्मशास्त्र में "पत्न्या सहाधिकारात्" के आधार पर यज्ञ दान आदि बड़े बड़े धर्म के कामों में तुम्हें अपने संग लें तभी पुरुष की उन उन धर्म के कृत्यों का अधिकार है।

शास्त्रवालों ने तुम्हारा महत्व और गौरव यहाँ तक माना है कि "अनाश्रमी न तिष्ठेत्" बिना गृहस्थ हुये न रहै ऐसा लिख गये हैं जो इस कारण संयुक्तिक भी मालूम होता है। कहा है:—

'ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य मनो मोक्षे निवेशयेत्'

विद्या पढ़; पुत्र पैदा कर, बड़े बड़े यज्ञ और दान- के उपरान्त तब मनको मोक्ष में लगावै अर्थात् सन्यास ग्रहण करै। ऐसा न होता तो कितने ऐसे सभ्य समाज के सिरमौर

संशोधन और देशहित का बीड़ा उठाये महा महन्त माननीय मान्यवर क्यों सदैव पत्नी-पत्नी रटते; उनके बद्धांजलि वशंवद रहते और बिना उनकी आज्ञा के एक कदम आगे पाँव न रखते। तस्मात् हे, पत्नि ! लोक और वेद दोनों तुम्हारी नमस्या और अपचिति में सावधान और प्रवण है। हे पत्नि ! तुम्हारे कोमल अंग-सौष्ठव का संपर्क; तुम्हारे अधरामृत का पान, वाचास्व कोकिला-लाप, कुहू-नाद को तिरस्कार करने वाले तुम्हारे कोकिल-कण्ठ-निर्गत शब्दों को जिसने अपने कानों का अतिथि न किया उस लंडूरे का जीवन ही क्या ? करण-रसायन द्व्यक्षरात्मक पत्नी शब्द सुन और तुम्हारा मोहनी रूप देख कौन ऐसा युवक है जो आप्यायित हो आनन्द निर्भर न हो जाता हो ! हे आदि रस की अधिष्ठात्री ! शूर-वीर साहब लोग मुल्क के इन्तिजाम की चतुराई मे कहीं से नहीं चूकते पर तुम्हारे समस्त नाज़ नखरो पर अपना अधिकार जमाना तो दूर रहा एक साधारण गौन के इन्तिज़ाम में उनकी सब भूल जाती है; छोट-भइये औसत दर्जे की तनखाह पाने पर भी सदा कर्जदार बने रहते है।

जिस घर मे तुम अपना सौम्य-रूप धारण किये हो वहाँ समग्र संपत्ति हँस रही है। जहाँ तुम्हारा विकट भयंकर प्रचण्ड और उद्दण्ड रूप घर के एक एक प्राणी को बिकल किये है वहाँ दरिद्र का बास, रुदन और क्रदन का सहकारी हो हाहाकार मचाये हुए है। सेवा करने में दासी; एकान्त में सलाह देनेवाली मित्र; घर-गृहस्थी की बातों में उपदेश देनेवाली गुरु; पति-भक्ता, पति-प्राणापत्नी उन्हीं को मिलती है जिन्होंने किसी पुण्य तीर्थ में अच्छी तपस्या कर रक्खा है। गज-गामिनी जिसकी चाल के आगे हंसों को अपनी चाल का घमण्ड चला जाता है; जिस पिक-बैनी की वचन माधुरी सुन कोकिला लज्जित हो मौन-व्रत धारण कर लेती है; जिसके नवनीत कोमल अंगों के साथ होड़ होने में चमेली की

कोमलता पत्थर सी कड़ी मालूम होती हैं; शोभा और सौन्दर्य की अधिष्ठात्री लक्ष्मी जिसके लावण्य जलधि की लहरी में अचंभे में आय गोता खाने लगती हैं :—

"एका नारी सुन्दरी वा दरी वा"

भर्तृहरि की यह उक्ति ऐसी ही सह धर्मिणी के मिलने से सुघटित होती है। इत्यादि, इस पत्नी के गुणार्णव को कहाँ तक पल्लवित करते जाँय। इसकी फलस्तुति में विश्वगुणादर्श का यह श्लोक उपयुक्त मालूम होता है :—

व्यापारान्तरमुत्सृज्य वीक्षमाणो बधूमुखम्।
यो गृहेष्वेव निद्राति दरिद्राति स दुर्मतिः॥

सब काम काज छोड़ जो वनिता-भक्त पत्नी के मुख की छवि निरखता हुआ घर में सोया करता है वह मूर्ख अवश्यमेव दरिद्र का दास बन जाता है।

मार्च १६०४

(५) वधूस्तवराज

हे ललना ललाम ! हे कुलकामनियों की आदर्शस्वरूप ! हे गुणगरिमाविशिष्ट ! तुम अपने स्वाभाविक सहज गुण से चिराभ्यासी योगियों की सहिष्णुता को सहज ही में जीत लेती हो। हे वंशप्ररोह जननी ! यह लोक परलोक दोनों मे सुख देने वाले शुद्ध सन्तान के पैदा होने की बीज भूमि तुम्ही हो।

"सन्ततिः शुद्धवंश्या हि परत्रेहच शर्मणे"

देवी, तुम्हारे सङ्ख्यातीत अनगिनत दिव्यगुणों को गिन चुकता कर देने की किसकी सामर्थि है। हे बड़े कुनबे वाले गृहस्थों के घर की दीपशिखा-सी समुज्वल वेशधारिणी विविध वेशभूषाविहारणी ! बेटी के भाव में जब तक तुम अपने बाप के घर को सुशोभित करती रहती हो तब तक पिता के घर का तुम्हारा अखण्ड स्वर्गीय राज्य को भला किसकी सामर्थि कि खण्डित कर सके ? भौजाइयो पर तुम्हारी सतत हुकूमत उद्धत स्वच्छन्द बिहार और तुम्हारी अठखेलियों का निरूपण लेखिनी की शक्ति के बाहर है। पर ससुराल के लिये देहली से बाहर पाँव रखते ही एक-बारगी पतोहूपन सङ्क्रामित हो न जाने पहले की सब बातें किस कन्दरा में जा छिपती हैं। औद्धत्य सहसा विनीतभाव में परिणत हो जाता है। स्वच्छन्दता भूत के आवेश सी उतर कौन जाने कहाँ गायब हो जाती है। देवी, यदि तुम्हें लोकोत्तर सहिष्णुता "बरदाश्त" का बल या भरोसा न होता तो थोड़ी थोड़ी बात में खाँव-खाँवकर दौड़ने वाली सास तथा ननदों का हठ और जोर जुल्म कैसे सहज में सहने लायक होता। दुर्गा-पाठ में लिखा है :—

'विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु'

जितनी विद्यायें सब तुम्हारे रूप हैं। संसार में जितनी स्त्रियाँ वे भी सब तुम्हारी ही प्रतिकृति हैं। ग्रन्थकर्ता मार्कण्डेय ऋषि इतना ही गोलमगोल कह चुप हो गये आगे साफ-साफ कहने की हिम्मत न कर सके।

हम कहते हैं देवियों में भी कई तरह की हैं जिनमें एक महाकाली होती हैं। वो जितनी सौम्य और सद्गुण वाली हैं वे सब महालक्ष्मी और सरस्वती हो बहू के रूप मे घर की लक्ष्मी बन आती हैं और घर को देव-मन्दिर बना देती हैं। पर जो चण्डी कर्कशा नित्य कलहकारिणी फूहर मैली-कुचैली हैं वह महाकाली के रूप से घर में प्रवेश कर घर को श्मशान तुल्य कर देती हैं। एक-एक आदमी की जिन्दगी दूभार कर दी जाती है 'जन्मनष्टं कुभार्यया' तस्मात् हे चण्डी, तुम अपना चण्डरूप का सङ्कोच कर सौम्य दृष्टि से हमे आप्यायित करती रहो तो इसी में हमारा कल्याण है। बहुधा जो गृहस्थ हैं जिनको अपने कुल की लाज निभाने का बड़ा ख्याल है वरन सदा इसी चिंता में व्यग्र रहते हैं कि चादरे के चार खूंट हैं न हो कि किसी खूंट में दाग लग जाय इसलिये उद्धत हो जाने से मुँह मोड़ सदा सबसे नम्र रहते हैं। मानो शील और सङ्कोच के बोझ से दबे जाते हों ऐसों ही के घर को देवी तुम बहू बन सुशोभित करती हो। जिनमें ये पूर्वोक्त भाव नहीं आये अपनी हर एक बातों के घमण्ड से तीनों लोक को तिनका तुल्य समझते हैं वहाँ उनके संहार के लिये तुम काली-सी कराल काल-रात्रि हो प्रवेश करती हो। तुम्हारे चण्ड रूप का प्रकाश वहाँ पहुँचते ही सब छिन्न भिन्न होने लगता है और जल्द उस घराने की इतिश्री हो जाती है। इससे हे देवी, यह शक्ति आप ही को प्राप्त है चाहे सोने के पाँव से घर में प्रवेश करो चाहे लोहे के। आपका स्वर्णपद गृहस्थी में समस्त अभ्युदय-

दायक है। भाग्यवानों के घर की लक्ष्मी बनने को आप सुवर्ण के पाँव से प्रवेश करती हो दरिद्रों के यहाँ आप लक्ष्मी की बड़ी बहन बन कर आती हो। जहाँ आलसी निरुद्यमियों का दल मैले-कुचैले भेष से पेट की अग्नि के मारे काँव-काँव मचाये हुये लड़ रहे हैं; जहाँ पुंवत प्रगल्भा कर्कशाओं का दल अष्ट प्रहर कलह और दाँत किर्रने का पुरश्चरण कर रही है; वहाँ तुम पहुँच उन कराल चण्डियों की चण्डीश्वरी बन बड़ी शोभा पाती हो और तुम्हारे समुचित समागम से उस घर की बुराई के लिये सुख्याति में भी कुछ कसर बाकी नहीं रहती। देवी, आज इस स्तवराज के द्वारा तुम्हारा गुण-कीर्तन कर फल स्तुति में यही प्रार्थना करते हैं कि हमारे पढ़ने वालों को अपने प्रचण्ड कराल भेष के दर्शन से बचाये रहो और जिनके यहाँ कोई ऐसी कराला हों उनको तो इस स्तोत्र का पाठ बहुत ही सामयिक है।

जून १६०६

[६] कार्तिक स्नान

भाई ; वाह कार्तिक स्नान भी क्या ही कैफियत का नहान होता है। इस साल हमारे पञ्च महाराज पर भी न जाने क्या शामत सवार हुई कि कार्तिक नहाने का हौसला चर्राया। पौ-फट होने के पहिले जब हाथ से हाथ नहीं सूझता था घर से चल खड़े हुए। रास्ते में इनके लड़काई के दोस्त एक बनिता लम्पट से इन की भेट हो गई। पञ्च महाराज को इस पतित अपाहिज की अद्‌भुत चेष्टा और कुढग देख घिन तो बड़ी हुई जी कुढ़ गया पर क्या करें आँख की शील न तोड़ सके 'अद्यप्रातरेवानिष्टदर्शनं जातम्' इत्यादि, चित्रग्रीव के किस्से का हितोपदेश के कई जुमले याद आये। ईश्वर का स्मरण कर मन में कहा भगवान तड़के ही इस मनहूस की सूरत देखने में आई न जानिये आज का दिन कैसा कटे। अस्तु, अत्यन्त विनीतभाव से नम्रतापूर्वक बड़े अदब के साथ दूर से पैलगी कर पञ्चमहाराज भी चोहल के खयाल से इस लम्पट से जा मिले। पञ्चमहाराज की चार आँख होते ही झूमता लड़खड़ाता हुआ वह बोला—ओहो आप भी आये हैं! बहुत दिनों पर आज आपके दर्शन हुये मैंने तो समझा कि इस साल की गोमती की बाढ़ में आप भी कहीं बह गये। खैर, चलिये आप को नहान की कैफियत दिखलावें। दोनों आगे बढ़े। भगत जी को आते देख—'जैगुपाल साहब!' आपकी लम्बी माला तो खूब ही टट्टी के आड़ में शिकार है। 'जाइये जाइये' भीड़ निकली जाती हैं। बुड्ढे हुए तो क्या जी तो तरोताजा टटका बना है आगे बढ़—'यह कौन है'—सब पण्डितों के सिरताज महा पण्डित श्रीमान् पुश्चलीदास और कुलटा कुलघालक। राम करें यह जुगुल जोड़ी जुग-जुग जीवें। भला कातिक के नहान को किसी भाँत

रौनक तो पहुँचा रहे हैं—शाबास लगी रहै टकटकी !

'लोचन रोम रोम प्रति माँगों ।'
'एक टक रहैं मिमिष नहिं लागैं पद्धति नई चलाऊँ'
'नैननि उहै रूप जो देखो'
'तौ ऊधो यह जीवन जग में साँच सुफल कर लेखौं'
मनते ये अति ढीठ भये
वौतो आय बोलतो कबहूँ वे जुगये सुगये
ज्यों भुवंग केचुरी बिसारत फिर नहि ताहि निहारत
तैसेहि जा मिले इक टक ह्वै उरते लाज निवारत

सच है ये नेत्र नही है वरन 'मनमथ वान दुस्सह अनियारे । निकसं फूटि हिये वहि ओर' रूप माधुरी को पीते-पीते अघाते ही नही। स्वर्ग मे इन्द्र सहस्राक्ष है यहाँ ये दो ही नेत्र से टक टकी मे सहस्राक्ष को परास्त करते है । टक टकी क्या भीत के उरेहे चित्र भी मात है । ये कौन है—काकचेष्टा बकध्यानी ! 'हाथ गौमुखी में मन सुमुखी में' । आहा ! आप हैं । बड़ी देर बाद पहचान गये। अभी नई उमङ्ग है इश्क के कूंचे में पांव रक्खा है ग्यारह महीने परखते परखते किसी तरह कातिक आया तो अब क्यों जी की जी मे रहै । ये कौन हैं—वैष्णवाग्रणी गोमतीदास। गोमतीदास जी, जै श्रीकृष्ण जाइये जाइये लौ लगी रहैः—

'चाहे जियरा जाय लगी कैसे छूटैं'
'लम्बा टीका मधुरी बानी दगाबाज की यही निशानी'

हमारे लाला जी बड़े सीधे-साधे सज्जन महापुरुष हैं। शील के सागर हैं। करें क्या? आँख का रोग लग गया है। एक पन्थ दो काज ! आँख भी सिक गई; 'मार्निङ्गबाक' चेहल कदमी भी हो गई। ये कौन हैं ये शहर के औवल दरजे के रईस हैं क्या करें टकटकी

का शोक इन्हें भी पैदा हो गया है। अपनी सब बात और प्रतिष्ठा को धूर में मिला रहे हैं ? लोहे तांबे उतर चुके कोई बात बाकी नहीं है। और ये कौन हैं—ये बाबू साहब हैं। बाबू साहब "बयकनुक्त आबूशवद्" माशा हैं माशां बंगाली माशा, "की तुम्ही भलो वाशो बाबू साहब।" यह कौन आई ? सब कुलटाओं की सिरमौर मानो दूसरी कामकन्दला माधवानल को कहां छोड़ आई ? चल फड़कती छमाछम, यह मारा, वह काटा, यह लूटा।

"अठिलात जात गोरी रंग में भरी"

काम कन्दला के कदम ब कदम यह दूसरे कौन हैं ? पोथा-धरी कथक्कड़ व्यास--नमस्कार व्यास जी नमस्कार "नमोव्यासाय महते"।

"जयति परासरसूनुः सत्यवतीहृदयनन्दनो व्यासः"

श्लोक का गढ़ने वाला भूल गया आखिर आदमी की अकिल कहां तक खता न करे। सत्यवतीहृदयनन्दनो की जगह नवयुवतिहृदयनन्दनो कहना था। गोपियों में कन्हैया इन्हें जो चैन है सो किसी को न होगा, धर्म के वक्ता, अधर्म के कर्त्ता, लम्पटता के राह दिखलाने वाले आचार्य। इनकी रसीली तिरछी चितवन ने कितनी अबलाओं का मन मूठी में कर रक्खा है—

"तिरछी चितवन पीतम प्यारे मन वैरागी मोरा रे"

"जाइये जाइये, मैं आप के आनन्द में बाधक नही हुआ चाहता। अब ये विकट सूरत रोरी का आड़ा जमाये कौन आये ? "दिनो-पवासी जटाधरः सकुलटाभिलाषी" महामहोपाध्याय कुक्कुटमिश्र

"गुरोर्गिरः पञ्च दिनान्यधीत्य वेदान्तशास्त्राणि दिनद्वयं च।
अमीसमाघ्राय च तर्कवादान् समागताः कुक्कुटमिश्रपादाः॥"

"जाइये जाइये" आपको अभी देर तक सन्ध्या करना है। इनका

सा गुप्त होना भी काम रक्खा है "गुप्तो मुक्तः प्रकटो भ्रष्टः" इत्यादि कुढंगों का कुचरित्र देख पञ्चमहाराज का जी ऊब गया। बड़ी घिन पैदा हुई। उसे अपने साथी से किसी तरह गला छुटाय घर चले आये और कार्त्तिक के स्नान को सदा के लिये प्रणाम किया। जो कुछ वहाँ देखा उसे लेखनी बद्ध कर हमारे पास भेज दिया जिसे हमने भी अपने पढ़ने वालों के चित्त विनोदार्थ यहाँ प्रकाश कर दिया।

अगस्त १८९४

(७) रूपवानों में रूप का रहस्य

वाह ! आप की भी क्या ही भोंड़ी समझ है—रूपवानों में रूप क्या है इस छिपे रहस्य का पता लग गया तो छैल-चिकनियाओं के चित्त में रूपवान होने की सब हवस ही गई गुज़री हुई। अगर यह लटका हाथ लग गया तो बाकी क्या रहा मानो ज़िन्दगी का सब हौसिला पूरा हो गया—इसलिये कि कौन ऐसा होगा जो रूपवान् होना न चाहता हो अथवा अपने शरीर में जो कुछ कज या ऐब हो उसे दूर करना न चाहेगा। अजी दिन का दिन न सही तो पहर भर घंटा दो घंटा कम से कम घड़ी दो घड़ी तो इसके लिये जरूर ही चाहिये।

इस रूप की कसावट की हम कई मद्द कायम करते हैं पढ़नेवाले मिला लें कि किस मद्द के वे है। सच तो यों है कि निपट फेशन की खाक छानने की ख्वाहिश से चेहरे की सफाई, कपड़े और बालों की दुरुस्ती में कौन ऐसा होगा जो थोड़ा समय अपना न लगाता हो। कौन ऐसा होगा जो कुरूप से कुरूप होकर भी औरों से इसमें अपने को हेठा मानता हो। वही कहावत ठीक ठहरती है कि लोग अपने को उन आँखों से नही देखते जिनसे कि और दूसरे उन्हें देखते है। जिससे सिद्ध होता है कि मनुष्य के लालची चित्त में जहाँ नाम की, पदवी की, औलाद की, धन की, लालसायें हैं वहाँ रूपवान् होने की हवस भी होती है। किन्तु यह पिछली हवस किसी की पूरी हुई है या पूरा होना सम्भव है सो रूपवानों की जुदी-जुदी मद्द जो हम यहाँ पर कायम करते हैं उससे निश्चय हो जायगा।

रूपवानों की एक मद्द उनकी है कि खाने को चाहे एक

टुकड़ा रोटी भी घर में न हो पर गोरे गालों पर तेलपनिया और छल्लेदार बालों में कंघी दातों में मिस्सी की धज सम्हालते पहरों और घंटों लगे खैर किसी तरह सिंगार कर-कराय फारिग हुये पान की बीड़ियों से गाल फुलाये बाहर निकले तो इस फिराक में लगे कि कहीं से ऐसे को तलाश करना चाहिये जो हमारी छबि की कदर करने वाला हो और कोटि कन्दर्प लजावन उनके रूप पर मोहित हो नौवाबजादों की लिस्ट में उनका नाम दर्ज करले। कहने का तात्पर्य यह कि रूपवान् होने का अभिमान यद्यपि बहुतों को है किंतु सौंन्दर्य या रूप कोई ऐसी चीज नहीं है कि उसके फिराक में पड़े रहने से वह हाथ लग जाय।

अब रूपवानों की दूसरी मद्द पर ज़रा मुलाहज़ा फ़रमाइये। अस्तु, चढ़ती उमर में तो कोई अपने को बदसूरत और कुरूप मानता ही नहीं प्रकृति का नियम भी कुछ ऐसा ही है।

"प्राप्तेतु षोड़से वर्षे शूकरीप्यप्सरायते"

किंतु उमर ढलने के समय आँखों को दातों को मजबूत खूबसूरत और वजेदार बनाये रखने को लोग क्या क्या नहीं करते क्योंकि जिसको जो बात हासिल नहीं है वह यदि यह मान ले कि यत्न किये से कुछ नहीं होता तो मानो वह अपने जीवन का बड़ा भारी सहारा खो बैठा। खैर, बड़ी कष्ट-कल्पना से सींग कटाय बछरों मे दाखिल होने की भाँत चुचके गाल और निचोड़े कपडे की तरह जर्जरित कलेवर में तेलपनिया कर-कराय रूपवानों में दाखिल भये भी तो लोग यह कभी न कहेंगे कि फलाने के बाल अच्छे हैं जब स्वभाव सुन्दर बालों का मुकाबिला आ पड़ेगा।

तात्पर्य यह कि हम हजार बन-ठन अपने कृत्रिम सौन्दर्य से प्राकृतिक रूप की तुलना यदि किया चाहें तो इससे बढ़ कर

बेहूदगी और क्या होगी। प्राकृतिक सौन्दर्य जैसा शकुन्तला के संबंध में कालिदास ने लिखा है—

"इयमधिकमनोज्ञा बल्कलेनापि तन्वी।
किमिवहि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्॥"

आप के बाल, दाँत, आँख, मुह, हाथ, पाँव, यद्यपि स्वभाव ही से बड़े खूबसूरत सुडौल और रूप की पताका हैं तब भी उनमें नित्य संस्कार की आवश्यकता है। एक दिन भी आप बालों में कंघी न करें दाँतों को न माँजें चेहरे को न धोवैं तो दूसरे ही दिन उस प्राकृतिक सौन्दर्य में खराबी पैदा हो जाय। सारांश यह कि रूप पाने पर भी नित्य संस्कार की आवश्यकता ही रहती है। कुरूप को रूपवान् होने पर यदि खेद है तो रूपवान् को अपना रूप सम्हाले रहने के पीछे पूरी मौत है तो जब खुबसूरती और रूप ऐसी नाजुक चीज है तो इसका मर्म और रहस्य जान लेना सहज नहीं है।

तीसरी मद्द रूपवानों की प्राकृतिक सौन्दर्य है जो अखण्ड पुण्यवान् कोई ऐसे भाग्यवान् है जिनको ऐसा रूप मिलता है जिसमें बनावट और संस्कार की कभी आवश्यकता ही नही पडती। जिनकी रूपमाधुरी देखते ही चित्त उधर खिच जाता है ऐसों को अपना बाहरी रूप बनाने और सजाने मे ऐसा यत्न और फिकिर नही रहती जैसा आभ्यन्तरिक चरित्र निर्दोष और बेदाग़ रखने मे होती है।

प्रिय पाठक ! सौन्दर्य से हमारा प्रयोजन बाहरी रूप-रंग के बनाने से नही है जिसकी दुर्दशा हमने आप को कह सुनाया। बरन सौन्दर्य और रूप से हमारा प्रयोजन चरित्र अथवा शीलपालन से है; क्योकि शारीरिक सौन्दर्य पहले तो सब को मिलता नही और न यत्न किये पर भी कोई उसे पा सकता है तो हम दूसरे ही प्रकार के सौन्दर्य के लिये प्रयत्न और चेष्टा क्यों न करे जो थोड़ी सावधानी और फिकिर करने से सुलभ है। और न इस सौन्दर्य के बढ़ाने की कोई अवधि है जहाँ

तक बढ़ाते जाइये कभी आप यह नहीं कह सकते कि हमारे और अधिक अच्छे होने की अब और गुन्जाइश नहीं है। एक अद्भुत बात इसमें और है कि जो इस सौन्दर्य में बढ़े हुये हैं वे अपने को कुरूप ही मानते हैं अर्थात् जो शीलपालन में खरे-पूरे हैं और सकल सद्गुणालङ्कृत हैं वे यही मानते है कि मेरे में लाखों ऐगुण हैं इसी से दूसरों का ऐगुण देखने या कहने में वे सदा सङ्कुचित रहते है।

एक अनोखी बात इसमे और भी है कि हम अपना बाहरी सौन्दर्य या रूप दूसरो के लुभाने को बनाते हैं जब हमारे रूपवान् होने की दूसरा मनुष्य प्रशंसा करे तब मानो हमारे सौन्दर्य का सार्टीफिकेट हमें मिला। पर इस आभ्यन्तरिक सौन्दर्य को किसी की सार्टीफिकेट की कोई जरूरत नही रहती यह भी हम दिखा चुके है कि बाहरी सौन्दर्य बढ़ाने या उसे कायम रखने के कितने खटराग है पर आभ्यन्तरिक सौन्दर्य के बढ़ाने मे किसी तरह का खटराग नही है न इसका दृढ़ और यावज्जीव चिरस्थायी रखना बड़ा दुष्कर है। बल्कि कठिन से कठिन तपस्या इसी चित्तवृत्ति के बिमल और स्वच्छ रखने की एक रास्ता है। तब हे हमारे रसिक पाठक वृन्द ! निष्फल शारीरिक सौन्दर्य के पीछे यत्न करना छोड़ सुलभ चित्त-वृत्ति को सुन्दर करने मे तत्पर हो, इसी से आप संसार भर को प्रसन्न रख मकोगे और अखण्ड आनन्द से पूर्ण रह प्राणीमात्र के बड़े उपकार के होगे।

मई १८६८

(८) जवानी की उमंगें

मनुष्य के जीवन मे जवानी की उमर एक बड़ी बरकत हैं। फूल जैसे जब तक कली के रूप मे हो बन्द रहता है डाल और पत्तों की आड़ में मुदा हुआ न जाने किस कोने में पड़ा रहता है। खिलने के साथ ही अपनी सुबास सौन्दर्य और सोहावनापन से सबों के नेत्र और मन मधुप को अपनी ओर खीच लाता है किसी तरह छिपाये नही छिप सकता। कली होने पर वह किस उठान से उठा था क्या क्या उसमें गुन-ऐगुन थे खिलने के साथ ही सब एक बारगी खुल पड़ते है; आगे को अब उससे क्या-क्या उम्मेद है सो भी उसका इस समय का विकाश प्रकट कर देता है। उसकी इसी बात को हम उमंग इस नाम से पुकारते हैं जो हमारी भविष्य आशाबंध को मजबूत या ढीला करता है। -'आत्मानं नावमन्येत'''' मनु की इस आशा के अनुसार उन्नतमना ऊँची तबियत वालों में वह उमंग सदा ऊपर को उठने के लिये होती है; जघन्य निकृष्ट मलिन संस्कार, मैली तबियत के लोगों में पहले तो उमंग होती ही नही हुई भी तो सदा नीचे गिरने की ओर होती है—

नवयुवकों में ऊँची उमंग देख आशालता लहलहाती हुई नित्य दृढ़ होती जाती है; उनमें उस उमंग का अभाव या उसे नीचे के ओर जाते हुए पाय आशालता सूख कर मुरझाती हुई ढीली पड़ जाती है। इस उत्तम श्रेणी में दाखिल हों इसके लिये यत्न करना किसी खास एक आदमी के हिस्से में नहीं आ पड़ा वरन हर एक आदमी को इसकी कोशिश करना मनुष्य जीवन की सफलता और मुख्य काम है। वह नौजवान जो ऊपर को नहीं देखता

निश्चय है नीचे को ताकैगा; तीर चलाने वाला जो अपनी बाण-विद्या से आकाश को बेध डालना चाहता है उसके तीर का निशाना कहाँ तक ऊँचे से ऊँचे पेड़ के ऊपर तक न जायगा। जिसके ऊँचे से ऊँचे ख्याल हैं या जिसका ऊँचे से ऊँचे वर्ताव का क्रम है वह कहाँ तक अपने ख्याल और वर्ताव मे उससे बेहतर न होगा जिसमें उन बातों का अंकुर भी नही है। बोल-चाल और काम मे कपट या कुटिलाई का अभाव मनुष्य में चरित्र पालन का पीठ की रीढ़ के समान सहारा है और सचाई पर दृढता तो मानो चरित्र का मुख्य अंग है। इसलिए ऊँची उमंग वाले युवक जनों को चरित्र पालन के इन दो प्रधान साधनों को दृढ़ता के साथ पकड़े रहना चाहिये। दूसरा बड़ा दोष नवजवानो में बनावट (Assump ion) का है जैसे बाज कीड़े न जाने कहाँ से पैदा हो फूल को विकास के पहले ही जब वह कली रहता है तभी उसे नष्ट कर डालते हैं; वैसा ही इस बनावट का अंकुर नवयुवकों में तारुण्य के विकाश के पहले स्थान कर लेता है। हजारों लाखों नौजवान इस तराश खराश बनावट सजावट के पेच में पड़ दुर्व्यसनी हो बीस या पचीस वर्ष की उमर के पहुँचने के पहले ही लोहे ताँबे उतार चुकते है, जो समय उनके पूर्ण विकाश का है उसमें जरा जर्जरित हो जाते है। गाल चुचक गया, पीले पड़ गए, कमर झुक गई, सच है—

जो न होइहै बीस पचीसा सो का होइहै तीसा।

इसलिए नई उमंग वालों को इस बनावट कृमि से अपने को बचाने की बड़ी चौकसी रखना उचित है—किसी बुद्धिमान् गंभीराशय का कथन है "Always endeavour to the really what you would wish to appear" हमेशा इस बात की कोशिश करते रहो कि तुम लोगों में अपने को वैसा

ही जाहिर करो जैसा तुम वास्तव में भीतर से हो। नुमाइश नौजवान में आना उमर का तकाजा और उसकी नई-नई उमंगों का एक अंग समझा जाता है पर उसका न आना बहुत बड़ा सौभाग्य समझना चाहिये। जाहिरदारी या नुमाइश न रख जो उमंग उठती है वह उसके भविष्य जीवन में महोपकारी हो उसको (Great man) महापुरुष बनाने मे सहकारी होती है। धीरे-धीरे चुपचाप वह अपने महत्व की आलीशान इमारत लगातार बनाता जाता है। शरत् कालीन कुआर कातिक में जो बादल आते हैं वे गरजते इतना नही पर बरस के बसुधा को सब ओर से जलमग्न कर देते है। वैसे ही ओले छिछोरे भड़क तो बहुत दिखलाते हैं पर करतूत बहुत कम उनमें देखी जाती है; किंतु जो गुरुता सपन्न होते है वे मुख से कुछ नहीं कहते पर परिणाम से उन के फलों का अनुमान कर लिया जाता है—

फलानुमेया: प्रारम्भा: संस्कारा: प्राक्तनाइव।
"करतूती कहि देत आप नहि कहिये साँई"

और भी—

गरजति शरदि न वर्षति, वर्षति वर्षासु नि.स्वनो मेघः।
नीचो बदति न कुरुते, न वदति सुजनः करोत्यवश्यम्॥

नौजवानी की उठती उमर ऐसे अल्हड़पन की होती है कि इस उमर में (Precaution) दूरन्देश या पूर्वविधान बिल्कुल नहीं रहता। बुरी आदतें एक-एक कर पड़ती जाती हैं। जिस समय उन खराब आदतों का आना आरम्भ होता है कुछ नहीं मालूम होता, जैसे पहाडों पर जब बर्फ गिरने लगता है कभी किसी के ध्यान में नहीं आता पीछे थोड़ा-थोड़ा कर जमा होते होते वही (Avalanche) हिम संहति हो जाती है तब सूरज की तेज गरमी भो उसे नहीं पिघला सकती। इसी तरह अल्हड़पन

की उमंग में खराब आदतें जब आना शुरू होती है बहुत उसपर ध्यान नही जाता पीछे वही इतनी दृढ और बद्ध मूल हो जाती हैं कि आमरणान्त जन्म भर के लिये दामनगीर हो जाती हैं और हजार-हजार उपाय उनके हटाने की जाती है कोई कारगर नही होती। इससे गदह पचीसी का जब तक यह नाजुक वख्त गुजर न जाय तब तक बड़ी सावधानी रखनी चाहिये। इस नाजुक वख्त में जो भलाई का बीज नही बोया जाता तो बुराई आप से आप आ जाती है; जैसे खेत धरती बहु फलवन्त और उर्वरा है जोता बोया न जाय तो लम्बी-लम्बी घास उसमें खुद बखुद उपज आती है :—

Vice quickly springs unless we goodness sow.
Rankest weeds in richest garden grow.

बुद्धिमानों का सिद्धांत है आदत या बान पड़ते-पड़ते पीछे दृढ़ और बद्धमूल हो स्वाभाव हो जाती है मानो मा के पेट से वह वैसाही पैदा हुआ है। यूरोप के एक दार्शनिक का मत है कि मनुष्य पाप या पुण्य आदि जो कुछ करता है वह सब उसकी वैसी बान पड़ जाने का नतीजा है। खुलासा यह कि स्वभाव से बहुत कम काम होते हैं जो कुछ किया जाता है वह सब आदत है। तो आदमी क्या है मानो जुदी-जुदी तरह की आदतों का एक गट्ठर है। इसी से यह कहावत चल पड़ी है 'आदत दूसरे तरह का एक स्वभाव है' (Habit is a second nature) इस कहावत का सबूत यों है कि धैर्य गाम्भीर्य विचार संयम आप की आदतों में दाखिल हो जाय तो छिछोरा पन टुच्चापन साहस आदि से आप को चिढ़ हो जायगी। ऐसे ही जो ओछी छिछोरी आदत का है उस को संयमी, विचारवान् गभीराशय काहे को भले लगेंगे—एवम् चुगली-चवाव हेरफेर कुटिलाई जिसकी आदत में दाखिल हो जाते हैं उसको चैन नहीं पड़ती

बरन अन्न नहीं पचना जब तक किसी का कुछ चबाव या किसी की चुगली अथवा हेर फेर की कोई एक बात न करले। तो नवयुवक को सावधान रहना चाहिये कि ये बुरी आदतें अपने में कदम न जमाने पावे नहीं जन्म भर छुटाये न छुटेंगी।

ये सब गुन-ऐगुन जिन्हें हमने ऊपर कहा प्रतिक्षण बड़े जोर से साथ बढ़ते हुए आदमी के चरित्र को शोभित करते हैं या उसे दगीला कर डालते है। जिससे हम अपने में चरित्र पालन की शेष बातों को भी नहीं बचाय सकते। जो सुफेद कपड़ा पहने हुए है कपड़ों के मैले होने के भय से जहाँ तहाँ बैठते सकुचता है, जो मैला कपड़ा पहने हुए है उसे क्या जहाँ चाहे वहाँ जा सकता है—

'यथा हि मलिनैर्वस्त्रैर्यत्रतत्रोपविश्यते।
एवं चलितवृत्तस्तु वृत्तशेषं न रक्षति' ॥

जैसे उजाला छोटे से छिद्र से भीतर प्रवेश कर अन्धकार को दूर हटा देता है वैसे ही आत्मगौरव का अणुमात्र भी खयाल मनुष्यों को बुराई या बुरी आदतों की ओर से अलग करता है, जिनके आँख का पानी ढरक गया शरम और हिजाब को धो बैठे उन्हें नीचे से नीचे काम करने में सकोच नही रहता। नौजवानों में इसके नमूने बहुत से पाये जाते हैं। नई उमंग में बहुधा नौजवान आत्मगौरव का ध्यान न रख बड़ों की बड़ाई रखने में चूक जाते हैं जिससे संसार में बदनाम हो अशालीन और धृष्ट की उपाधि पाते है। इसलिये उनको बड़ों की बड़ाई रखना मानों अपना बड़प्पन बढ़ाना है इत्यादि उनके उमंग की हमने यहां पर कुछ थोड़ी भी समालोचना कर इस लेख को समाप्त कर आगे पढ़ने वालों के सामने उपहार की भांति दूसरा विषय रखते हैं।

जनवरी १९०१

[९] कौश्रापरी श्रौर श्राशिकतन

श्राज हमारे पंचमहाराज गोपियों में कन्हैया के परतो पर कौश्रापरियों के बीच श्राशिकतन बनने की ख्वाहिश मन में ठान भोर ही को घर से चल खड़े हुए—

मन लगा गधी से तो परी क्या चीज है

मह मत समझो हमारे पंचमहाराज श्राशिकतनी में किसी से पीछे हटे हुए है घर मे चाहे भूंजी भांग न हो दिल दिमाग तो सात ताड़ की ऊँचाई से भी श्रधिक ऊँचा है। नेउले का सा मुँह सूरत में साक्षात् छायासुत, किंतु सौन्दर्य श्रौर हुस्न में कोटि कन्दर्प लजावन तरहदारी में भटियावुर्ज के नौवाब किस हकीकत मे। श्रबे श्रो खड्डेदार बुल्ले ! क्या तुझे भी श्राशिकतन बनने का हौसिला चर्राया क्या ? सूरत लंगूर मगर दुम की कसर है। दुम न हो दुमदार सितारे को नोच कर लगा दूं। श्ररे श्रो बीचुड्डो ! श्रञ्जनगिरि पर्वत की श्यामता का श्रनुहार करने वाले तुम्हारे श्रङ्ग प्रत्यङ्ग की छबि पर तन मन सब वारे ये मुफलिस कल्लांच होकर भी श्राशिकतनों मे नाम लिखाये तुम्हारे पीछे खराब खस्ता हैं, तुन्हारे लिये बेकल है। इश्क के फदे में गिरफ्तार बेबस हैं, श्रसीर हैं। बेकल इतने कि कलकत्ता की कौन कहे कालापानी छान श्राने पर भी तुम उन्हे श्रपना दासानुदास चरण सेवक कर लेने को राजी हो तो उन्हें कोई उजर नही है। श्रब तो इस कूचे में पांव रख चुके। श्राशिकों की फिहरिश्त में नाम दर्ज हो गया। लोकनिन्दा श्रौर बदनामी को कहाँ तक डरैं। श्रोखली में सिर दे मूसलों की धमक से कहाँ कोई बच सकता है। शरम को शहद

समझ चाट बैठे। बिना बेहयाई का जामा पहिने आशिक के तनजेब नहीं—

गाढ़े इश्क के हैं हम आशिक।
तेरी जुदाई मे मल मल के हाँथ रहते हैं॥

हाय मेरी कौआपरी—कौआपरी—कौआपरी—अफसोस जर दिया जनानों को पास माल न हुआ नहीं तो कौआपरियों की पलटन खड़ी कर हम उसके कपतान बनते या तो शाह वाजिद-अली किसी जमाने में हुये थे या अब हमी इस वक्त देख पड़ते। अच्छा तो क्या बिलाई के भैंस लगती है किसी मालदार को चल कर फँसावें। ओ हो! आप है—पण्डितअमुक! अमुक! अमुक! बाबू फलां! फलां! फलां! मिस्टर सो ऐण्ड सो! सो ऐण्ड सो! लाला साहब वगैरह! वगैरह! ओः खोः! आप क्या हैं—बला हैं! करिश्मां है! तिलिस्मां है! फिनामिना है! आश्चर्य और अद्‌भुत तथा लोकोत्तर वस्तु का सन्दोह है। उठती उमर और जगजानी जवानी के जोश के उफान मे बीबी लेकगोहिना के नवासे है।

चुलबुल चालाक चतुर चरपर छिन छिन में होत।
छैले छबीले छिछोरे ओर छोर के॥

क्या कहना आप ही तो है! भला यह तो कहिये आपने कितने कण्टाप और पदाघात के पश्चात पदाधिरूढ़ हो अनङ्ग अखाड़े की पहलवानी प्राप्त की:—

'सदा शठः शठापालं मल्लो मल्लाय शक्ष्यति'

सींक से पतले आप के भुजदण्ड आप की पहलवानी की गवाही दे रहे है। मुरछल आप हाथ में क्यो लिये रहने हैं? नही नहीं यह तो नीम की टहनी है। क्या कौआपरियो में नवधाभक्ति के साधन का योग सिद्ध हो गया?

स्मरणं कीर्तनं विष्णोरर्चनं पादसेवनम

धनुषाकार कमान सी झुकी हुई कमर से भी बोध होता है आप की तपस्या सिद्ध हो गई महाप्रसाद पाय गये—

लक्षाणामब्दमेकन्तु धूम्रपानमधोमुखी

उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम ।।

सुमुखी नही सुमुखो कहिये—मुमुख, दुर्मख, कृष्णमुख, धोड़मुख, लोखरीमुख, बीघमुख, मुख के जितने विशेषण जोडते जाइये हम सब का एक-एक उदाहरण आपको देते जॉयगे। गरज कि पञ्चमहाराज आशिकतनी के महकमे को नीचे तक टटोल इसे अथाह और बे ओर-छोर पाय ऊब गये और निश्चय किया कि इन कौआपरियों के फन्दे मे पड़ तन और धन दोनों का तहस-नहस है। ईश्वर शत्रु को भी इनसे बचाये रक्खे यही सब सोचते-विचारते घर लौटे ।

अप्रैल १८९८

[१०] रुचना या पसन्द

रुचना या रुचि मनुष्य मात्र की अलग-अलग होती है इसी से कवि शिरोमणि कालिदास ने लिखा है।

भिन्नरुचिर्हिलोक:

जिस तरह या जिस बात से आदमी अपने मन के हवस की दधकती आग को बुझा सकता है उसी को रुचि या पसन्द कहते है। संसार के यावत् विषय है सबमे सब की पसन्द कभी एक सी नही रहती। देखा जाता है एक ही बाप के दो लड़के है रूप-रंग डील-डौल में दोनों एक से है पर पसन्द दोनों की कभी को इतनी अलग-अलग होती है, कि एक ईरघाट तो दूसरा मीरघाट। भिन्न रुचि पुनर्जन्म के सिद्ध करने का बड़ा भारी द्वार है। हम लोगों का अवश्य कुछ पहले का ऐसा भारी लगाव रहता है जिसे संस्कार कहेगे कि वह हमे एक तरह की रुचि का नही करने देता। कितने लोग इस भिन्न रुचि का कारण सत्सग दु:संग या दशा परिवर्तन कहते हैं पर तले तक डूब के देखिये तो उस तरह का सग या दशा परिवर्तन क्यो हुआ उसी पूर्व संस्कार की प्रेरणा से। खैर, यह तो दार्शनिको के झगड़े और ऊहा-पोह हैं। प्रकृतमनुसरामः हमारी रुचि अधिकतर खाने पीने पहनने-ओढ़ने, सवारी-शिकारी, सगत-सोह्बत मे देखी जाती है जिनकी ओर मनुष्य का मन सहस्रो स्रोत से इतना अधिक बेग से दौडता फिरता है जिसका रोकना आदमी की ताकत के बाहर है। इसीलिये आध्यात्मिक विचारशील महात्माओं ने यही सिद्धान्त कर रक्खा है कि संकल्प विकल्पात्मक इस मन ही

को मार डालना चाहिये तब पसन्द या रुचि तो उस मन की एक महा मुग्ध दशा है जिसे कब उसमें ठहरने का अवकाश मिल सकता है ।

अंगरेज़ी राज्य और अंगरेज़ी शिक्षा के प्रभाव से हमारे देश में अब उसी पसन्द के दो खण्ड हो गये हैं एक पुरानी अर्थात् निरी हिन्दुस्तानी दूसरी नई अर्थात् अंगरेजी पसन्द। यह तो सदा का एक अटल नियम चला आया है कि राजा की झुकावट जिस ओर को होगी प्रजा भी उसी ओर को मुड़ जायगी और इस अङ्गरेजी पसन्द के बारे मे तो कहना ही क्या है। आज दिन सब भाँत दैव इन पर सानकूल है तब अङ्गरेज़ी पसन्द केवल हिन्दुस्तान ही मात्र की क्या बरन दुनिया भर की रुचि के अनुकूल हो सकती है बिलाइत के वणिक् और सौदागरों के भाग्य को उत्कर्षता है। देशी चीजें बेकदर क्यो हुई इस लिये कि उनमें नुमाइश नहीं है। हमारे साहब लोग टाट महा खुर खुरा कपड़ा पहनै तौ भी वह पसन्द के लायक है क्योंकि उस मे नित्य नई तरह की नुमाइस का दखल रहता है। उसी के न होने से हमारी देशी चीजे अङ्गरेजी कारीगरी के मुकाबिले भद्दी मोटी और महँगी जचती है। बाबा खरीदै पोते बरतै इस किफायत को सूमपन और दरिद्रता के अनेक कारणों मे झोंक दीजिये। बिलाइत की बनी चीजोकी नुमाइश सुबुकपन और आशाइस पर ध्यान दीजिये। एकही चीज को एक बार मँहगी से मॅहगी खरीद जन्म पर्यन्त उसी को लिये सती होते रहे तो नई ईजाद और नई तरक्की फिर कहाँ रही। अस्तु, जो हो अङ्गरेजी सभ्यता की पसन्द जिस ढर्रे पर ढुलक रही है उसमें एक प्रकार का अद्भुत कड़ापन कार्कश्य और रूखापन है जिसे हम अपनी हिन्दुस्तानी पसन्द के साथ मिलाते है तो आकाश और पाताल का अन्तर पाया जाता है। और सब छोड़ पहले पोशाक लीजिये माना कि हमारे साहब

लोग अति शीतल देश के रहने वाले हैं इस लिये उन्हें भारी और अधिक कपड़ों की जरूरत है। रूई और पशमीनों के चिकने और नफीस कपड़ों की ईजाद हो गई और होती जाती है किन्तु, साहब लोगों को टाट और जीन ही पसन्द आता है सो क्यों? इसलिये कि इस दोनों की बुनावट में जैसी कड़ाई और खर-खरापन है वह हमारे हुजूर लोगों के मिजाज के साथ जोड़ खाता है और जैसा आराम उस में उन्हे मिलता है वैसा बयालिस आँक की तनजेब अद्धी और आबरवाँ में काहे को मिलने वाला है। अस्तु, हमारे साहब लोग ठंढे देश के निवासी है इतना मोटा कसा और खरखरा कपड़ा उन्हे जेब देता है। खून लगाय शहीदी मे दाखिल होने वाले हिन्दुस्तानियो को जो ऐसे कपड़े पसन्द आते जाते है सो इसी लिये जिसमें रिवाजवक्त (Fassion of the day) में फर्क नही पड़ता। यह तो कपड़ों के बारे में हुआ, ऐसा ही तेल, केश-शृङ्गार सिरके वालों की काट छाट, या बदन मे लगाने की बस्तु साबुन और लवेंडर आदि सुगन्धि द्रव्य, अङ्गरेजी पसन्द वालो ने निहायत उमदा खूशबू मान रक्खा है जिन्हें देख कर भी शायद हिदुस्तानी पसन्द वालो को घिन होगी और उनकाक ड़ापन उन्हें पसन्द न आवेगा न उन्हे बरदाश्त होगा। खैर, चुरट की करीह और कड़ी दुर्गन्धि को अलग रखिये।

नाम बड़ा दरसन थोड़ा

आपकी गोलडेनलीफ तमाखू हमारी घटिया से घटिया तमाखू जिसे देश के गरीब काम मे लाते है सो भी गोलडेन लीफ से कितना कम कड़ी है। यहाँ पर पसद ना पसदका (Standard) सूत्र हम स्त्रियो को मानते है जिनकी रुचि अङगरेज़ी पसन्द की ओर झुकने की कौन कहे सर्वथा उसके विरुद्ध है जिसका कारण भी यही माना जायगा कि उनकी कर्कशता वे बरदाश्त नहीं कर

सकतीं। ऐसा ही ललनाओं ने अपने लिये जो मण्डन सामग्री मान रक्खा है उसे पसन्दीदा कहने में हम समझते है किसी को उजर न होगा।

यह एक बड़ा पक्का सुबूत है कि चाहे जितना खर्च हो और उष्ण देश के रहने वाले होने से अति शीतल देश के पहनाव और खुशबू आदि मे हमे वैसा आराम भी चाहे न मिलै किन्तु बिलाइत में उसका प्रादुर्भाव हुआ है और लण्डन, मेनचेष्टर, पेरिस, डवलिन आदि नगरों की उस पर मुहर है तो वह सर्वथा हमारी रुचि के अनुकूल होना ही चाहिये। वही हमारे प्रभुवरो में इसके विरूद्ध देखा जाता है हजारों साहब लोग हिंदुस्तान में ऐसे है कि उन्हें बीसो वर्ष यहाँ रहते बीत गया पर यहाँ का पानी नही अब तक पिया, चाहे जो खर्च हो बोतलो में भर-भर बिलाइत का पानी आता है वही वे पीते हैं इसका नाम जन्मभूमि वात्सल्य है। बहुत से साहब लोग हमारे पसन्द की चीजें काम में भी लाते हैं तो चोरी छीपा खुला-खुली उनको न वर्तने का कारण कदाचित् यह है कि चीजें नेटिव के पसद की हैं। नेटिवों के बर्ताव की चीजों को खुला-खुली अपने काम मे लाना इससे बढ़ कर उनके वास्ते और क्या बेइज्जती हो सकती है। मामूली खानपान की चीजों को अलग कर उनके तीर्यत्रिक अर्थात् नृत्य, गीत, बाद्य को लीजिये तो उस पर ख्याल कर जी कुढता है। नाच उनका ठीक बन्दरों की-सी उछल-कूद है। संगीत में हमारे यहाँ के गान की सुघराई अंगरेजी गान मे एक भी नहीं है। जो इनके यहाँ के बाद्य यंत्रों पर ठीक-ठीक उतर सके। इनके यहाँ सिवाय सात स्वरों के उतार चढ़ाव से बढकर स्वरों की कोई दूसरी खूबसूरती हुई नही। लय और तालों की अत्यन्त सूक्ष्मता जो यहाँ के स्वरों मे है बिलाइत के बड़े-बड़े गान विद्या प्रवीणों की कभी स्वप्न में न

सूझैंगी । ऐसा ही वास्तु विद्या इमारतों की पल्ले दरजे की बारीकी और मजबूती यहाँ ही है इनके यहाँ के बेजोड़ मकानों की बारीकी तथा मजबूती देख दुख होता है कि क्यों हुनर म्यामारी पर तलवार चलाई गई । इतनी अपूर्णता पर भी ये बुद्धिमान और सभ्यता की नाक है । सब तरह के गुणो में पूर्णता होने पर भी हम गँवार असभ्य और मूर्ख बने है । समय पड़े की बात है सच है :—

प्रतिकूलतामुपगतेहि बिधौ विफलत्वमेति बहुसाधनता ।
अवलम्बनाय दिनभर्तुरभून्नपतिष्यतः कर सहस्रमपि ॥

अगस्त १८९९

(११) सुगृहिणी

पण्डितों ने अपनी पोथियो में स्त्रियों को हर तरह पर घटाया है "स्त्रियाँ बड़ी बेईमान होती हैं कपट की कठपुतली है हृदय इन का छूरे की धार के समान होता है बुद्धिमान इनका विश्वास कभी न करै इत्यादि-इत्यादि।" चञ्चला, अबला, प्रबला, भीरु, आदि विशेषण इनके नामो के आगे लगाय जहाँ तक निन्दा करते बन पड़ा करते गये उनके यावत् गुणों को मटियामेट कर पुरुषों को उनके मुकाबिले सिरताज किया और स्त्रियों को सिवा लौडी और दासी बनाय रखने के उन्हें किसी काम ही को न रक्खा। अपने आधीन रख सब तरह का अत्याचार और जुल्म उन पर करना रवा और उचित समझा। हम इन पण्डितो को कैसे समझावें कि आप लोग भूल में पड़े हो जिन्हें आप चञ्चला, भीरु और अविश्वास के योग्य मान बैठे हो वे आपके घर की शोभा है ससार की सार पदार्थ है। दारुण घोर विपत्ति और अनर्थ जिनमें पड मर्द पस्तहिम्मत और किंकर्त्तव्यतामूढ हो जाता है और अपने को मिट्टी में मिला मान लेता है उनमें स्त्रियाँ हतोत्साह न हो निःशंक स्थिर चित रह बड़े-बड़े दुःख और मुसीबतों के झकोर को सहती हुई घर के प्राणियों को दिलासा हर तरह पर सहारा और आराम पहुँचाती हैं। जिस कसौटी में कसे जाने पर पुरुष फिसल कर भरे मुँह गिरता है उसमें ललना जन नेकचलनी का नमूना दिखलाते हुए पर्वत की शिला सी रह अपने शुद्ध पवित्र चरित्र पर निर्भर हो बेदाग रहती हैं।

एक बार एक बडे पुराने दोस्त से भेंट हुई। आशीष-प्रणाम और मामूली बातचीत के उपरान्त दोस्त ने कहा—भाई, तुम बड़े

भाग्यवान् हो गृहस्थी न रख बहुत तरह की फिक्र और तरद्दद से बचे हो। हम लोगों के लिये घरगृहस्थी भी बड़ी झौझट है उनका जीवन धन्य है जो निहंग लाड़िले नोन तेल लकड़ी की चिन्ता से बरी हैं।

मित्र जी का उदास और मुतरद्दिद चेहरा देख उनके साथ हमदरदी तो मुझे जरूर हुई किन्तु कुछ तो चुहल के ख्याल से और कुछ दोस्त साहब को बेवकूफ समझ उन्हें बनाने की नीयत से मैंने कहा आप क्यों उदास और फिकिरमन्द हो रहे हो ? क्या हमारी भाभी साहबा आपकी खिदमत से इनकार करती है ? आप तो लड़के-बाले वाले हो बाहर कैसा ही तरद्दुद और फिकिर में डूबे हो घर पहुँच छोटे-छोटे बच्चों की तोतरी मीठी बोली सुनते ही कलेजा दह हो जाता है सब चिन्ता और फिकिर भूल जाती है। मन कैसा ही उदास हो घर वाली ने एक बार मुसकिरा कर प्रेम पूर्वक कटाक्ष से देख दिया मानो जन्म सफल हो गया। स्वर्ग-सुख तुच्छ और फीका मालूम होने लगता है। इसी मतलब से गृहस्थी की जाती है कि घर के सब लोग मिलकर उस बोझ को हल्का किये रहैं जिसका उठाना एक आदमी के लिये बड़ा मुशकिल है। इस तरह पर अपने दोस्त को मै देर तक टटोलता रहा पर उनकी उदासी का सबब न खुला। बड़ी देर के बाद अन्त को कुछ ऐसा उन्होंने जाहिर किया कि मित्रजी को रोजगार करने का हौंसला चर्राया तो कलकत्ते में जाय दो टकिया चौट किया गवर्नमेंट पेपर का व्यौपार करने लगे, दोस्त साहब को रुपया पैदा करने की हवस तो बढ़ी ही थी इतना अकिल न जोर कर सकी कि यह व्यौपार बिल्कुल जुआ है लग गया तो तीर नही तो तुक्का। लख-पती को भी बनते बिगड़ते देर नही लगती तो अल्प धन वाले जैसे हमारे मित्र किस गिनती में थे। प्रारंभ में दो-एक बार थोड़े दिन तक सर सब्ज रहे कलकत्ते के बाबुओं का साथ पाय

मिजाज बदल गया बाबूपने की अमीरी ने उसमें जगह कर लिया मन मानता गुलछर्रे उड़ने लगे बालू की भीत सा ओछी पूँजी का ब्योपार कब तक चल सकता है उसमें कलकत्ते का खर्च। रुपया बहुत अधिक हो गया और लक्ष्मी किसी तरह हटाये न हटती हो तो कलकत्ता या बम्बई मे चला जाय और वहाँ अमीरी के ढँग पर रहने लगे। बात की बात में रुपया पास से खसक जायगा और मालूम न होगा। हमारे दोस्त को कागज के रोजगार मे ऐसा धक्का लगा कि लेई पूँजी सब गँवाय बैठे कौड़ी-कौड़ी को मुहताज हो गये। बाबूपने की बुलन्द शाहखर्ची की कौन कहे झूरी नोन रोटी को भी तरसने लगे। दोस्त साहब का तवारीख में इतना और याद रहे कि जिस समय ये कलकत्ते कमाई करने गये थे और लाखों का वारान्यारा इन के हाथ से हुआ उस समय बहती गगा में हाथ धोने की भाँत कभी एक पैसे का सुलूक अपनी बीबी और लड़के तथा घर वालों के साथ इन्होंने न किया अब अपाहिज और लाचार हो उन्हीं लड़के और बीबी के गले पड़े। बीबी भी ऐसी नेकबख्त थी कि पिसना पीस-पीस जेवर बेच-बेच लड़कों को पाला। मसल है:—

"जैसा कन्था घर रहे वैसे रहे विदेश"

जब मियाँ ने लाख कमाये तब भी वैसे ही और अब भी जब उन्होने लाख को खाक में मिलाय धूर फाकने लगे तब भी वैसे ही—मैं बड़ी देर तक पशोपेश में पड़ा रहा कि अब आगे इनका और भेद क्यों कर मिलै कुछ थोड़ा ठहर फिर मैंने पूछा कि क्या हमारी भावज को तुम्हारा यह सब हाल मालूम नहीं है।

मित्र जी ने कहा यही तो एक और मेरे दिल को बड़ा सदमा है जैसे किसी को भीतरी चोट पिराती तो है पर ऊपर कोई

उसका चिह्न नहीं देख पड़ता। जब मैं खुशहाल था उस समय मेरा कुछ और ही ढंग था कभी गुमान था कि मैं इस हालत को पहुँचूँगा? अब सिवाय बेहयाई इखतियार कर लेने के और क्या करूँ—आदमी के लिये मुफलिसी बड़ी बला है। सच है:—

'अहो निधनता सर्वापदामास्पदम्'

मैं फिर भी अपनी घरवाली की तारीफ करूँगा कि वह कभी मुझ से एक बात नहीं कहती बल्कि उलटा हमी को समझाती है कि तुम क्यों इतना उदास रहते हो। गृहस्थी की चिन्ता मत करो भगवान् ने मुँह चीरा है तो खाने को दे हीगा तुम शरीर से सुखी रहो तुम हो तो मेरे नथुनी बिछिया की लाज बनी है। मेरा जीवन तो तुम्ही से है जो कुछ जेवर बचे है ले जाओ फिर कोई रोजगार करो खर्च की तंगई मत सहो ईश्वर करेगा फिर सब कुछ हो जायगा। आदमी की नीयत दुरस्त रहनी चाहिये जिनकी नीयत में फरक नही पड़ा उनकी रखवाली भगवान् करता है।

मुझे ऐसा विश्वास न था कि स्त्रियों में ऐसी हमदरदी होती है मुझे अब निश्चय हो गया कि व्यर्थ ही लोग स्त्रियों को दोष देते हैं वास्तव में पुरुष की जाति बडी खुदगर्ज निठुर और निर्दय है अपने अपने आराम और फाइदे के लिये मर्दों ने औरतों को हर तरह पर बदनाम कर रक्खा है। इसके पहले मेरा भी यही ख्याल था और मैंने उसे बड़े-बड़े क्लेश दिये मैं समझता हूँ यह उसी का फल है कि मैने इतने-इतने दुःख सहे खैर, अब तो आगे के लिये तोबा करता हूँ कि कभी कोई ऐसी बात न करूँगा जो घरवाली के विरुद्ध हो। यह कह मित्र जी मुझ से विदा हुये और मैंने भी अपने घर की राह ली और यह सोचने लगा कि मित्र हमारे कम अकिल तो जरूर है पर स्त्री इनको बुद्धिमती और नेक मिली है। अपनी कम अकिली का फल ये पा चुके अब राह पर आ गये

तो अवश्य अब इनकी ऐसी दशा न रहेगी। ऐसा ही हुआ भी। मित्र ने थोड़ी ही पूँजी से रोजगार करना शुरू किया और कुछ दिन बाद इन का दुःख दरिद्र दूर हो गया साथ सुख और आराम के अपने दिन काटने लगे। सच है:—

'सन्तुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव गृहे नित्यं कल्याणं तत्र वैध्रुवम्'—

जिस घर में भार्या से भर्ता और भर्ता से भार्या परस्पर प्रसन्न रहते हैं वहाँ सब संपदा सदा वास करती हैं।

जून १८९५

[१२] चली सो चली

परमेश्वर की सृष्टि में कितनी ऐमी बाते हैं कि जो चली सो चली काहे को कभी रुक सकती है। सौ-सौ उपाय करो उनका वेग नहीं रुकता। जैसे कर्कशा लड़ाकिन स्त्रियों की ज़बान एक मुह में सौ-सौ गाली जीभ क्या कतरनी है, ग्रांधी हैं, रेल की इंजिन है चली सो चली कौन ऐसा दैव का दूसरा पैदा हुग्रा है जिसके रोके रुक सकै। गाली से झोटि झोटे की नौबत पहुँची, गटपट हो लड़ते लड़ते लस्त हो गई पर जबान न रुकी बाहरे इस चलने का जोश। इसी तरह राँड़ का चरखा, कुंजड़िन भठियारिनों का मुँह—बस चला सो चला किसके रोके रुकै। इस चलने को गिनते चलिये—सूरज चलता है, चाँद चलता है, पृथ्वी चलती है, ग्रह-उपग्रह नक्षत्र, तारागरण को साथ लिये ग्रासमान चलता है, दिन चला, रात चलो, पचास वर्ष के हुए, उमर की उमर समाप्त हो गई, मुहबाये रह गए लोगों को खबर हुई बाँध बाँधू चार जात भाइयों के कंधे पर सवार हो चल बसे, राम नाम सत्य है, बस चले सो चले ग्रब नहीं लौटेंगे।

ग्राज हम चले कल तुम चले परसों किसी दूसरे की बारी ग्राई इस चलने से कोई नहीं बचा कितना ही यत्न करो एक दिन सबको चलना है।

चलाचलमिदं सर्वं

कालचक्र की प्रेरणा से यह जमाना ही चल रहा है ग्राज ग्रौर है कल कुछ ग्रौर है। हुक्म चलता है। राजा का हुक्म चलता है। प्रजा का हुक्म चलता है। जोरू का हुक्म चलता है। लाट का हुक्म चलता है। कलट्टर का हुक्म चलता है। कोतवाल का

हुक्म चलता है, सफाई के जमादार का हुक्म चलता है। कहाँ तक गिनावें म्युनिसिपलिटी की कृपा से कूड़ा ढोने वाले मेहतर का हुक्म चलता है। हुमायूं बादशाह के जमाने में एक शक्केने चाम की चकती चलाई थी इस अङ्गरेज़ी राज्य में कागज का रूपया चलता है लाख रूपया मुट्ठी में दाब लो मालूम न हो। सब लोग जिसे गाड़ी कहते हैं सो भी चलती है। रसिक पढ़ने वालों को प्रसन्न करने को हमारी कलम चलती है। लम्पटों के आँख का इशारा चलता है। चोर और उचक्के का पराये माल पर मन चलता है। दलालों में बीच बाजार अद्धी-अद्धी के लिये पैंजार चलता है। सूदखोर महाजनों का सूद चलता है दिन दूना रात चौगुना सौ दिया दो सौ का तमस्सुक लिखवा लिया एक ही वर्ष में दो सौ का चार सौ बात की बात में हो गया। कुलपुत्र सपूतों का नाम चलता है।

नाम काल नहिं खाय

टोडरमल टिकइत राय सरीखे न जाने कब हुये हैं। जिस तीर्थ में देखो टिकइत राय का धर्मशाला तैयार है। शालिवाहन और विक्रम को किसने देखा है पर उनका शाका और संवत् आज तक चला जाता है। कवि और शायरों के मस्तिष्क का परिणाम उनके उनके काव्यो का प्रचार आचन्द्रतारक चलता है। इसी तरह पर साहूकार हुण्डी वालों की साख जो चली सो चली घर में चाहे भूँजी भाँग न हो चार महाजनों में साख बँध गई लाखो का भुगतान होता है साख चल पड़ी है हुण्डी पुरजा कही से नहीं रुकता। अन्धपरम्परा न्याय के अनुसार बाल्यविवाह इत्यादि कुरीतै जो चल पड़ी सो चल पड़ीं किसके रोके रुक सकती है। इत्यादि, इस चल पड़ने के नमूने यहाँ पर थोड़े से दिखलाये गये।

इसी के विरुद्ध कितनी बातें ऐसी हैं जो अड़जाने के लिए

प्रसिद्ध हैं। कितनी ही फिकिर करो जौ भर इधर-उधर न हटैंगी। हमारे जैसा यहाँ परिवर्तन विमुखता पुरानीलीक की पैरवी कितना ही कोई समझावे हमारे पुराने खयाल वाले जो अड़े सो अड़े पुरानी-लीक के बाहर न होंगे। हिंदुस्तान में मँहगी और दुर्भिक्ष अड़ रहा है। भारत के साथ दुर्देव विलाइत के साथ सौभाग्य और दिनदूनी रात-चौगुनी तरक्की अड़ रही है। हमारे ब्राह्मणो के साथ मुफ्तखोरी की आदत भिक्षुकी वृत्ति अड़ रही है इस भिक्षुकी ने ब्रह्मतेज इनमें न रहने दिया अपाहिज और अपावन इन्हें कर दिया पुरुषार्थ की कहीं गन्ध भी न रह गई तो भी दक्षिणा की आशा ने इनका पिण्ड न छोड़ा:—

नित्यं प्रसारितकरो दक्षिणाशाप्रसाधकः।
न केवलमनेनैव दिवसोपि तनूकृतः॥
एष एव महान्दोषो शालेर्द्विजकरस्य च।
पुनर्वसुसमृद्धोपि हस्तोंदकमपेक्षते॥

बिलाइत के लोगों के साथ शूरता साहस और सूरमापन अड़ रहा है। हिंदुस्तानियों के साथ कायरता भीरुता अनुद्यम बड़ी मजबूती के साथ कदम जमाये अड़ रहा है। हमारे हुजूर लोगों में आज़ादी रोब और प्रभुता आय अड़ी हुई है। हमारे में हर तरह पर परा-धीनता दास्यवृत्ति और सहनशीलता ने अपना अटल राज्य स्थापित कर लिया है। पराधीनता और सहनशीलता की बुनियाद हमारे में न जाने किस कुसाइत से पड़ी कि नस-नस को यह दाब बैठी कहीं से हमें उभड़ने ही नही देती। हम समझते है बचपन में जन्म घूँटी के साथ हमें पराधीनता का रस निचोड़ कर पिला दिया जाता है और बचपने ही से इस बात की ताकीद रहती है कि खबरदार आज़ादी के पास न खड़े होना इसका जहरीला असर तुम्हारे में आजायगा तो खराब जाओगे समाज संबंधी धर्म सम्बन्धी स्वाधीनता को अवकाश टिक जाने के लिये मिल जायगा अन्त को यह बुरा

अभ्यास पड़ते-पड़ते राजकीय विषयों में भी तुम आज़ाद होने की ख्वाहिश ज़ाहिर करने लगोगे। ये सब तुम्हारे कुलक्षण भारतदुर्दैव से नहीं देखे जाते इसी लिये उसने अपनी सहचरी पराधीनता को तुम्हारे पास भेज दिया और यहाँ आय अड़ गई। इस तरह पर थोड़ा सा नमूना अड़ जाने का दिखलाया गया। सारांश यह कि इस चलने और अड़ जाने के बीच में पड़ इङ्गलैंड सौभाग्य की सीमा का उल्लंघन किये हुये तरक्की करता जाता है हिंदुस्तान उसी चलने और अड़ जाने के पेच में पड़ा हुआ नीचे को गिरता हुआ रसातल रसीदा होता जाता है।

जनवरी १८९८

(१३) चलन

चलन—बाजार—न पैसा घाट न पैसा बाढ़—चोखा माल चोखा दाम—मोल तोल का क्या काम। चलन—सिक्के की—बादशाह हुमायूँ के वख्त में सक्के ने चाम की चकती चला दिया था।

चलन—हुण्डी की—दरसनी देखते ही रुपया गिन दो नही दवाला। जिनकी हुण्डी मे बट्टा उनकी बात में बट्टा। मुद्दती है, मिती पुजने पर चुकती न हुई डिगमिगाने—तकाज़ेपर तकाज़ा एक, दो, तीन—अंबोल गये साख गई टके को कोई नहीं पूछता कौड़ी के तीन-तीन।

चलन—भलमनसाहत की—बात के धनी—

प्राण जाहि बरु बचन न जाही

"विदुषां वचनाद्वाचः सहसा यान्ति नो बहिः।
यातश्चेन्न पराञ्चन्तिद्विरदानां रदाइव।"

चलन—टुच्चों की—तुम से तुम्हारी सी उन से उन की सी। मुँह में राम-राम पेट में कसाई का काम। ऐसा काटै कि लहर न आवै।

अहो खलभुजङ्गस्य विचित्रोयं बधक्रमः।
अन्यस्य दशति श्रोत्रमन्यः प्राणैर्वियुज्यते॥

चलन—कुलाङ्गनाओं की—

गतागतकुतूहलं नयनयोरपांगावधिस्मितं—
कुलनतभ्रुवामधर एव विश्राम्यति।
वचः प्रियतमश्रुतेरतिथिरेव कोपक्रम—
कदाचिदपि चेत्तदा मनसि केवलं मज्जति।

गंगा भी चाहती हैं कि सती, सावित्री, कुलवती कब आकर हमारे में नहाय, हमें पवित्र करेगी।

अपि मां पावयेत् साध्वी स्नात्वेतीच्छति जाह्नवी—
भारत में अभी बहुत ऐसी पड़ी हैं उन्ही के पुण्य से देश थमा है।

चलन—व्यभिचारिणी कुलटाओं की।

मैं व्यभिचारिन जनम की, जरा अवस्था लीन।
तू दुलही कलिकाल की सुरसति दूती कौन॥
अतिविनयवामनतनुर्विलंध्यते गेहदेहलीनववधूः।
अस्याः पुनरारभटी कुसुम्भवाटी विजानाति॥
एते वारिकणान् किरन्ति नाम्मोधराः।
शैलाः शाद्वलभुद्वहन्ति न सृजन्त्येते पुनर्नायिकान्॥
त्रैलोक्ये तरवः फलानि सुवते नैवारभन्ते जनान्।
धातः कातरमालपामि कुलटा हेतोस्त्वया किं कृतम्॥
"सुखशय्यास्ताम्बूलं विश्रब्धालापचुम्बनादीनि।
गणयन्ति न लक्षाशं त्वरितक्षणचौर्यसुरतस्य।"

ईश्वर इनके फन्दे से बचावे—

चलन—हिंदुस्तान के वीर बांकुरे क्षत्रियों की।

क्षात्रधर्म की थाप। रखना अपना परताप।
चाहो आगे आवैं बाप। तबहू चाप खैंचना—

चलन—पुराने समय की महाजनी और पुराने समय के लेन देन की। केवल बात पर हजारों का लेन देन होता था न स्टैम्प का कुछ काम था न अदालत में कोई जाता था हाथ को हाथ पहचानता था। बाप करजा छोड़ जाता था तो बेटा उसका पहिले ऋण से उद्धार कर तब गया करता था। अब कानून ने कितनी हिन्दी की चिन्दी निकाल रक्खा है कि बिना अदालत गये करजा वसूल होता ही नहीं न लेने वाले की नीयत दुरुस्त न देने वाले की।

चलन--आज कल के अंगरेजी पढ़ों का चाहे दस रुपये पर भी उन्हें कोई न पूछे पर ठाठ बाट कमती न रहे। मसल है:—

सोवैं भुसौले में सपना देखैं लाख टके का

चलन केरानी गीरी की। पिसना पीसते - पीसते सुबह से साँझ तक में दम मारने की फुरसत नहीं फिर भी काम की कसरत न मिटी। इञ्जिनड्राइवर तो इञ्जिन ठिकाने से पहुँचा निश्चिन्त हो जाता है कुइलड्राइवर को बे फिकिरी कहाँ जवाब-दिही प्रतिक्षण सिर पर सवार।

सेवा धर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः

चलन—हमारे हिन्दुस्तानी साहब लोगों की दिमाग परियों का शकल चुड़ैलों की।

दासस्य दासस्य च दासदासः

कूकर के चूकर चूकर के पेशकार।

शकल तामाखू के पिंडे की सी। ऐंठन आतशवाजियों में जैसा मुर्रा। रहन - सहन बोल - चाल में मानो टटके अहल बिलाइती अभी जहाज से उतरे हैं। काली सूरत पर काला कोट बूट काला पतलूम मुह में फलीता सिर पर हैट। मानो सिर पर झौआ औंधाये राजा इन्दर की सभा का कालादेव। रूपमाधुरी पर कोटि कन्दर्प न्यौछावर हैं। लियाकत में दूसरे लाटसाहब कुली-नता में सूर्य और चन्द्रमा के सदृश विमल और उज्ज्वल।

संततिः शुद्धवंश्या हि परत्रेह च शर्मणे

चलन—हमारे ना दिहन्द मुफ्तखोरों की। बरसों तक पत्र पढ़ते रहे दाम देने के समय निबुआ नोन। ऐसे नराधम किस लिये जन्मे खेद है।

चलन—कुटिल कुढँग खलों में सरल सुपात्र सज्जन की।

जिमि दशनन बिच जीभ बिचारी

चलन—हमारी नख से सिख तक रुखाई का जामा पहने हुये। बहुत चाहते हैं लोकरंजन में प्रवीण हों।

घी खाहियं शक्कर से दुनियाँ ठगिये मक्कर से।

बिना कुछ नोन मिर्च मिलाये जायका नही आशा पर क्या करैं बुरी आदत छुटाये नहीं छुटती।

"जाको जौन सुभाव जाय नहि जी से।
नीम न मीठी होय सीच गुड़ घी से"

देखते हैं तुम सरासरा अन्याय और अनुचित कर रहे हो, चाहियें कि हम भी तुम्हारी हाँ में हाँ मिलाय अपना मतलब गाठैं तुम्हैं यदि टोक देगे या तुम्हें रूखी सुनावैंगे तो तुम क्यों हमसे खुश होगे।

"अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः"

चलन—हमारे देश की अन्धी गूंगी बहिरी प्रजा का। वे मुह खोलना जानते ही नहीं चाहें इन्हें जितना दबाओ दबते जाँयगे अधिक सताओगे भीतर ही भीतर मसोस के रह जाँयगे आह भरना या काखना गुनाह है। किसी ने इन पर कुछ थोड़ी दया कर दिया निहाल हो गये फूले नहीं समाये। इनका हक इन्हें समूचेका समूचा मिल जाता सो तो कभी सम्भव नही है एक की जगह आधा और तिहाई भी मिल जाय तो ये उतने ही से प्रसन्न हैं। आधे पेट भी खाने को मिलता रहे तो उतने ही से संतुष्ट पेट भर खाने को कभी न मागैंगे। सबर इतना कि गम खाकर पेट भर लेते हैं अन्न की परवाह नही करते। क्षमाशील ऐसे कि बदला चुकाना सीखा ही नही कितना ही कहो कितना ही जगाओ तबियत मे जोश कभी जगह करे ही गा नही।

चलन—प्रेम की।

"है इत लाल कपोत ब्रत कठिन प्रेम की चाल।
मुखसों आह न भाखिहैं निज सुख करो हलाल"

चलन—हमारी अन्धी समाज की। सब तरह पर यह निश्चय करा दिया गया है कि जो चलन हमारी समाज का इस समय है हर तरह पर आर्य जाति की कमजोरी को दिन-दिन बढ़ा रहा है इसे छोड़ो और अब आगे को समझ के चलो जिसमें भला हो बहुत सो चुके अब जागो आँख खोलो अन्धे बने रहने से काम न चलेगा। एक बात भी मन में नहीं धसती।

चलन—कृतघ्न नाशुकरों की—

'यश्च निम्बं परशुना यश्चैनं मधुसर्पिषा।
यश्चैन गधमालाभ्या सर्वस्य कटुरेव सः"

चाहे अपना सिर काट के रख दो पर एहसान फरामोश कभी खयाल न करेगा।

"कृतघ्ने' नास्ति निष्कृतिः"

भलेमानुस सिर से तिनका टार देने के भी इतने एहसानमन्द होते हैं मानो लाखों रुपया उन्हें दिया गया। किन्तु अपना स्वार्थमात्र का मित्र कृतघ्न दबाने पर चाहे जितना गिड़गिड़ाये और चारदासी करै पर पीछे से दुश्मनी ही करेगा।

सन्तस्तृणोत्तारणमाङ्गात्सुवर्णकोटचर्पणमामनन्ति।
प्राणव्ययेनापि कृतोपकाराः खलाः परं वैरमिवोद्वहन्ति॥

अचरज है ऐसे विश्वासघातक का बोझ पृथ्वी क्योकर सम्हारें हुये है।

"उपकारिणि विश्वस्ते शुद्धमतौ यः संचरति पापम्—
तं जनमसत्यसन्धं बसुधे देविकथं वहसि"।

चलन—कृपणकदर्य लोभियों की—

"चमड़ी जाय दमड़ी न जाय"

बात जाय पत जाय निन्दा हो कहाँ तक कहैं जान तक चली जाय बला से धन पास का न जाय:—

"अर्थोस्तु नः केवलम्"

किं बहुना ऐसे वद्धमुष्टि अर्थंपिशाचों के ढंग और सिद्धान्त ही निराले हैं समझ निराली है सारांश यह कि एक निराली दुनियाँ के जानवर हैं। हम ने एक रास्ता दिखला दिया जो बच गये हों उनके भी चलन का पता लगालो।

जुला.ई १८९३

[१४] चलन की गुलामी

चलन भी क्या ही एक अजीब ढर्रा है। चाल जो चल पड़ी सो चल पड़ी किसकी सामर्थ जो चलन के प्रवाह को रोक सकै। एक नहीं लाख-लाख वेद की ऋचायें हजार-हजार पुराण के उपदेश सौ-सौ कुरान की आयतें चलन के विरोध में प्रमाण दिये जाँय पुराने इतिहास और तवारीखों में से छाँट-छाँट दृष्टान्त और नजीरें इसके लिये दिखलाई जाँय कि यह चलन या रिवाज जिस की गुलामी में तुम फसे हो हर तरह पर बेजा और तुम्हारी भूल है। इस तरह की गुलामी में सिवाय हानि के लाभ कोई नही है पर चलन के प्रबलप्रवाह में बहे सो बहे काहे को रोके रुक सकते हैं।

यद्यपि इस चलन की गुलामी से कोई देश और कोई जाति बचा नहीं है किन्तु जो देश अपनी उन्नति की दशा में है और जो जाति नित्य नित्य तरक्की कर रही है वहाँ यह चलन फैशन में दाखिल कर ली गई है खूबसूरती नफ़ासत और सभ्यता का श्रेष्ठ अंग समझी जाती है। बड़े से बड़े ओहदे-दार प्रतिष्ठित खानदानी लार्ड और डूक तक की मेम भरी मजलिस में बन्दरिया के समान परपति के साथ उछलती कूदती हैं हम लोगों के नेत्रों को महा असह्य अप्रिय मालूम होता है पर वहाँ यह सभ्यता की एक उमदा बानगी है और ताण्डव नृत्य के लालित्य को भी मात करता है। किसी की मेम कोई अपने नाथ बग्घी पर बैठाये घूमता फिरै किसी तरह का अन्देशा या खटका मन में लाना शाइस्तग़ी और शिराफत के खिलाफ है हमारे यहाँ कुलांगना ललनाओं को परपुरुष से बोलना और मिलना कैसा। एक बार किसी अन्य पुरुष की ओर नज़र उठा

देखना भी सतीत्व का जड़ पेड़ से छिन्न-भिन्न और निर्मूल होना है। यहाँ घूँघट तीन हाथ का लम्बा लटकता हो नख से सिख तक सोने से लसी हों पर पाँव नंगा रहेगा और बेड़ी की तरह एक-एक पाँव में पाँच-पाँच सेर का बोझ बिना डाले सन्तोष और प्रसन्नता नहीं। वहाँ पाँव का देख लेना ही मानों लाज और शरम की बिदाई करना है। चीनियों में स्त्रियों का पाँव छोटा होना खूबसूरती और नज़ाकत है लड़कपन से एक प्रकार का लोहे का जूता लड़कियों को पहना देते हैं जिसमें पाँव बढ़ने न पावे। ईरान देश की स्त्रियों का शरीर नख से शिख तक नकाब से ढँका होता है केवल दो छिद्र आँखों के आगे देखने के लिए खुले रहते है पर नकाब के भीतर से ऐसा टाँय-टाँय बोलती हैं कि कान की चैली उड़ती है।

इस तरह पर भिन्न-भिन्न जाति के नर तथा नारियों में कितनी ऐसी चलन रूढ हो गई है कि अब दूर होना किसी तरह सम्भव नही। अङ्गरेजों मे बीबी के गुज़र जाने पर उसकी बहन के साथ दूसरी शादी न करने की चलन पड़ गई है। विलाइत के लोग बहुत चाहते हैं कि इस रिवाज को तोड़ दें कई बार इसके लिये पार्लियामेंट में विल पेश हो चुकी है पर मंजूर नहीं होती हमारे यहाँ दक्षिणियों में मातुल कन्या परिणयन मामा की लड़की के साथ व्याह करना सर्वत्र शास्त्रविरुद्ध है दक्षिणी ब्राह्मणों को इस अंश में सब लोग निन्दते है किन्तु चलन जो चल पड़ी सो चल पड़ी किसी के दूर किये नही दूर होती बङ्गाल के कुलीन ब्राह्मणों मे बहुत विवाह की चलन है एक आदमी अठारह व्याह तक कर लेता है सब लोग चाहते भी है कि इस निन्दित चाल को उठा दे पर नहीं उठाये उठती। वहाँ इस उन्नीसवीं शताब्दी के सभ्यता के प्रकाश में भी उपयुक्त बर का मोल होता है कन्या के लिये जैसा अधिक

पढ़ा लिखा सुयोग्य बर चाहो वैसा अधिक दाम खरचो। बी० ए० पास किया हुआ ग्रेजुएट का सब से अधिक मोल अंडर ग्रेजुएट का उससे कम खाली इन्ट्रेंस पास हो उसका सब से कम। हमारे यहाँ सर्वथा निर्मूल नाड़ी वर्ग विचारने की चलन है घर अच्छा है बर अच्छा है कुल अच्छा है वर कन्या दोनों कुण्डली के ग्रह उपयुक्त स्थान में बैठे है। लण्ठाधिराज पुरोहित जी ने आँय-बाँय-शाँय गिन गुथ कह दिया नाड़ी एक होती है कन्या राक्षसी है सातवें महीने पति को भख लेगी नाड़ी वर्ग नहीं बनता कन्या तथा वर के बाप माँ मुँह ताक हाथ मल रह गये शादी फिस्स। पंजाब के खत्रियों में स्यापे का कुचलन है राँड़ और एहवातियों में कोई फर्क ही नहीं है स्थापे के गम से कभी खाली नहीं सधवा भी विधवा मालूम होती है जीते जी मृत प्राणी का कभी नाम भी न लेगी मरने पर उसके नाम इतना छाती पीटैंगी मानो मुहर्रम की ढोल या बारात के आगे धौसा पिटता हो। दंभ के महा-महोपाध्याय कनोजियों में तथा कायस्थों में या इस प्रान्त के सरवरियों में करार की कुप्रथा चल पड़ी है कितनी बिना ब्याही रह जाती हैं करार के माफिक धन देने को रूपया पास न हो व्याह न हो सकेगा। सरवारियों में एक प्रथा और भी है कि इनमें यज्ञोपवीत जो ब्राह्मणों का मुख्य संस्कार है विवाह का एक अंग हो गया है इधर जनेऊ लडके के कन्धे मे छोड़ा गया उधर चट्ट मगनी पट्ट व्याह वाल्य विवाह की कुरीति को ऐसा गहके पकड़े हुये हैं कि काहे को कभी उससे गला छुट सकता है। विवाह में गाली गाने की कुप्रथा भी एक जघन्य चलन में है असूर्यपश्या सूर्य चन्द्रमा भी जिन का मुख देखने को तरसते हैं सो सब परदेदारी को लात मार ऐसा फोश बकती हैं कि भाँड़ों की भी इतना फ़ोश बकने की हिम्मत न होगी। बाल्यविवाह स्त्रियों का मूर्ख रहना कुल-कुटुम्ब का

एकान्न भोजन एक-एक जाति का अलग-अलग चौका इत्यादि कुसंस्कार ऐसे दृढ़ हो गये है कि सब चलन में दाखिल कर लिये गये हैं। कितना ही समझाओ कि हमारी वर्तमान हीन दशा का यही सब बुरी रिवाज कारण है पेज के पेज रंग डालो कौन सुनता है वरन् इसे अपनी आर्यता का प्रधान और श्रेष्ठ अङ्ग मान लोग लिखने वाले की जीट उडाते है भ्रष्ट बेदीन नास्तिक इत्यादि उपाधि का खिताब उसको समाज से मिलना सहज हो जाता है।

हम कह चुके हैं कि जो जाति या देश स्वच्छन्द और तरक्की पर है वहाँ की कुचलन भी न तो आँख को अशोभित होती है न इसलिये उन्हे कोई निन्दता या निदरता है और न उनसे उनकी किसी अंश में कोई हानि है। किन्तु हिन्दुस्तान ऐसे गिरे देश में कुसंस्कार के रूप में वे ही सब चलन बद्धमूल हो कोढ़ में खाज हो गई हैं दिन-दिन हमारी घटती और ह्रास की सहकारी हैं।

गृहस्थ गृहमेधी आदि शब्दो के अर्थ पर ध्यान देने से बोध होता है कि गृहस्थी मनुष्य के लिये सब सुख की खान है। अंगरेजी में भी कहावत है—"अपना घर यावत् सुख का केन्द्र भाग है; इसी से सांसारिक जीव हम सबों के लिये पुराने समय के बुद्धिमानो ने गृहस्थी बाँध कर रहने का नियम किया है सो गृहस्थी आधीन स्त्रियो के है

"गृहैर्दारैर्मेधन्ते वर्द्धन्ते गृहमेधिनः"

फारसी की दो लब्ज जनाना और मर्दाना गृहस्थी ही से सम्बन्ध रखती हैं किन्तु घर के सम्बन्ध में मरदाने की कोई इज्जत नहीं है जैसा जनाने की। घर के मरदाने हिस्से में हम चाहे जैसे रहते हों जनाने के भीतर पाँव रखते ही हमें सब तरह पर सावधान बिनीत शालीन और बुर्दबार बन जाना पड़ता है। बाहर हम जगत् भर के शिक्षा गुरू पूज्य पाद और सकल प्रतिष्ठा की

खान हों पर अन्त.पुर में पाँव रखते ही अपना सब गौरव सदर दरवाजे की डेहरी पर छोड़ देते है। पाँच वर्ष के दुध मुहे बालक के समान नादान सरल कोमल और हलीम हो जाते हैं। तो सिद्ध हुआ कि गृहस्थमात्र को अन्त.पुर न केवल सब सुख की खान है वरन उत्तम से उत्तम शिक्षा हमे वही से मिलती है। जहाँ तक हम इसके गौरव और प्रतिष्ठा को चित्त मे आदर दे सब उचित है। उस अन्त पुर की हम लोगो मे जो दुर्गति और जो अपमान तथा हीनता है उसे कहते शरम आती है और सुनने से मारे दुःख के हृदय काँप उठना है सो इस सब शरम और दु.ख का कारण यही चलन की गुलामी है।

इस चलन की गुलामी ने जैसा अपना असर हमारे जनाने में पैदा कर रक्खा है उसे कहते शरम आती है। असर क्या बल्कि यह तो उन निरपराधिनी अबलाओ पर ऐसा भारी अत्याचार है कि पत्थर का कलेजा भी दरक उठे तो सभ्यजाति के लोगो को जो हमारी ललनाओ की दीनदशा पर तरस आता है तो कौन अचरज है। भूमण्डल मे स्त्री जातिमात्र की सतीत्वगुण मे शिरमौर भारत की ललनाओं में यदि चलन की गुलामी का असर कम हो जाता और उनकी दीनदशा का परिवर्तन किया जाता तो क्या हम भी इस लायक न होते कि तरक्की की सीढी पर पाँव रखते। सच मानिये केवल इसी पाप के कारण हम अधोगति को प्राप्त हो रहे है और पढ़ लिख उत्तम शिक्षा इत्यादि बाहरी तरक्की का कोई असर हमारी कौम पर नही होता। अच्छा तो इसमें उन निर्दोष अबलाओं का कुछ अपराध है नही इसमें दोष आरम्भ से पुरुषजाति का है! शुरू से चलिये सबके पहिले आठ वर्ष मे उनका विवाह कर देना। ऐसा क्रोध आता है कि जिस पामर ने गौरी-विवाह की महासत्यानासी चलन निकाला है मिलता तो उसकी तिल-तिल

माँस काट चील और कौओं को लुटाते। हमारे इन दिनों के संशोधक संशोधन का दम भरते हुए ग्यारह अथवा बारहवें वर्ष में कन्याओ को व्याह देने की राय पुष्ट करते है। हम कहते है क्या वह बाल्यविवाह न हुआ? रजोदर्शन के पूर्व उसका ब्याह कर दिया जाय यह कैद किस लिये रक्खी गई है? संशोधकों को चाहिए इस कुचलन को सबके पहले उठाने की चेष्टा करें इस बात की कैद कर दी जाय कि रजोदर्शन के पहले कभी कोई न व्याहे उपरान्त इखतियार है जहाँ तक देर हो सकै

"अधिकस्य अधिकं फलम्"

और जो इसके विरुद्ध करने का साहस करै उसको समाज से बड़ा भारी दण्ड दिया जाय! जब तक १२ वर्ष के भीतर ब्याह देने की चलन रहेगी तब तक लड़कों का ऊँची उमर मे व्याहना कहाँ संभव हो सकता है। माना तुमने लड़के को ऊँची उमर मे ब्याहने का प्रण भी कर लिया तो अब उपयुक्त पात्री उसको नही मिलती इसी से हम लोगो को लड़को का ब्याह भी लाचार हो छोटी उमर मे करना पड़ता है। शास्त्र में ऐसा बचन कही नही पाते कि बाप के लिये लड़के का ब्याह कर देना फर्ज है जैसा लड़कियो का ब्याहना धर्म समझा गया है। जिस समय १२ वर्ष और २४ वर्ष के ब्रह्मचर्य की प्रथा थी क्या उस समय १३ वर्ष के उपरान्त समग्र वेदवेदाङ्ग मे पूर्ण हो लोग गुरुकुल से आय गौरी से विवाह कर अपने करम को बैठ कर झीखते थे जहाँ विवाहोतर चतुर्थी कर्म एक प्रकार की ऊब थी वहाँ गौरी विवाह की कुप्रथा तो साफ-साफ असङ्गत और निरी बेअकिली है। चतुर्थी कर्म जो विवाह का एक अङ्ग है और इसीलिये इस नाम से कहलाया कि तब तक नियमपूर्वक सयम के साथ ब्रह्मचर्य से रहना उचित कर्म था। इसी कुचलन के कारण बीस ही बाइस वर्ष में गाल चुचक जाता है पिण्डरोगी चेहरा ज़र्द मानो

वर्षों से बीमार देह में ताब नहीं उठते बैठते तांवर आती है—

"नई जवानी मांझा ढील"

कमर झुक गई ३० वा ३५ वर्ष तक पहुँचे कि बुढ़ाने लगे। जब कि और और मुल्क के लोगों में तीस पैंतीस में नई जवानी का शुरू होता है यहाँ बुढ़ाने लगते हैं। चलन की गुलामी के पहले सूत्र की व्याख्या यहाँ तक हमने आप को कह सुनाया अब आगे चलिये।

हमारी ललनाओं का मूर्ख रहना दूसरी विपत्ति हमारे लिये है। सौ बालकों को पढ़ाने से उतना उपकार गृहस्थी का सुख और जन्म का साफल्य नहीं है जितना एक कुलवती बालिका के पढ़ाने से है। एक तो परदे के भीतर कैदखाने में बन्द उसमें निरा दासीकर्म में तत्पर उसपर नितान्त अपढ़ तब हम क्योंकर उम्मेद कर सकते हैं कि चलन की इस कदर पैरवी से हमें गृहस्थी का सुख मिलै और न मिला तो इसमें कुसूर हमारा है कि उन पराधीन बेबस ललनाओ का है? क्योंकि हमी तो चलन की गुलामी से जकड़े हुये उन्हें शिक्षिता होने से बरजते हैं। यदि हमारे देश में स्त्रियाँ विद्यावती होने लगैं तो अनेक कुरीतैं जिसके दूर करने को हम बाहर कितनी कमेटियां और समाजसंशोधन के नाम से सभायें किया करते हैं ताली पीट-पीट लेक्चर झाड़ा करते है फिर कभी इन बातों की जरूरत रह जाय। जब तक हमारे जनाने से उन बुराइयों की जड़ न कटेगी तब तक बाहरी कमेटी या सभा समाज पर कोई असर नही पैदा कर सकती। भले-भले घरों में टोटका टनमन के बहाने भूत-परेत; डाकिनी-शाकिनी की पूजा; ऊटपटांग मान-मनौती को स्त्रियों की मूर्खता ही ने स्थान दिये हैं। चेचक के उपद्रव के समय प्रतिवर्ष सदहां लड़के जायां जाते हैं किन्तु स्त्रियों की मूर्खता ही के कारण शीतला है देवी हैं इस विश्वास पर दृढ़

रह कर गृहस्थ उस रोग का ठीक-ठीक प्रतीकार नहीं करते। मूर्खातिमूर्ख निपट निकम्मे साइत मुहूर्त बताने वाले ब्राह्मणों की प्रभुता घरों के भीतर अपढ ललनाओं ही के कारण से है। पुराणो के बेहूदा किस्से कहानियाँ जो कुछ उपदेश या भलाई पैदा करने के बदले मन और तबियत को बिगाड़ते है और बुराई की ओर रगबत दिलाते है उनमे स्त्रियो को रुचि और श्रद्धा भी उनकी मूर्खता का कारण है। ऐसी-ऐसी कितनी बातें है जिनसे हमारी समाज ऊपर को उठने को कौन कहे दिन-दिन गिर रही है इस सब का बाइस स्त्रियो का अपढ़ रहना ही है। पढ़ाने से हमारा यह प्रयोजन नही है कि प्रेमसागर ब्रजविलास खैराशाह की बाहरमासी या मीरहसन की मशनवी ऐसी-ऐसी नष्ट पुस्तके उन्हे पढ़ाई जॉय किंतु गणित भूगोल इतिहास दर्शन विज्ञान आदि की उत्तम से उत्तम पुस्तके पढ़ाई जॉय जिससे उनके नेत्र खुलें; हृदय का अन्धकार दूर हो पुराण की झूठी-झूठी गढन्त और किस्से का असर जो उनकी नस नस मे भरा हुआ है दूर हो ? उत्तम शिक्षा उन्हें दी जाय और अच्छे क्रम से शिक्षिता की जाँय तो उनकी रुचि आप ही इधर से हट जा सकती है। वरन् उन्ही पुराणो में वे खुद आप उन विषयो को अपने लिये मनोरजक चुन लेगी जिसके लिये पुराणकर्त्ताओ के बुद्धि-वैभव को हम कई बार सराह चुके है।

पुरानी लीक को पीटते जाना और मजहबी या धर्म सम्बन्धी जोश का हमारे देश में इसी तरह पर कायम रहना जैसा अब है ये दोनों बातें भी इसी चलन की गुलामी की बड़ी सहायक हैं। इसकी जड़ भी उमदी तरह पर तभी कटेगी जब स्त्रियाँ पढ़-लिख विद्यावती हो जाँयगी। बस हम बहुत थक गये आजाद ख्याल को हद्द से जियादह जगह दे दिया आप की खातिर के

खिलाफ हुआ हो तो माफ कीजियेगा भ्रष्ट नास्तिक बेदीन जो कुछ ख्याल हमारे निस्बत आपके मन में जमा हो लाचारी है पर मै आपका सच्चा सेवक और खादिम हूँ, किमधिकम् ।

जुलाई १८६३

(१५) रसाभास

इसे कौन अभागा स्वीकार न करेगा कि हमारे यहाँ की कवि मण्डली ने कविता की बारीकी में बड़ा सिर पचाया है और वाग्देबी अपनी उत्कर्षता को जैसा-हमारे वहाँ पहुँची है वैसा न किसी देश में पहुँची है न पहुँचेगी। इसी बारीकबीनी के कारण बढिया से बढिया रचना और काव्य जरा सी बात में दूषित और बेकाम कर दिये गए है। उन अनेक कविता के दोषों में रसाभास भी एक है जो जाति देश काल पात्र वर्ण आश्रम वय अवस्था आदि के प्रतिकूल वर्णन से सहज मे ही हो जाता है जो ऐसा भद्दा और बेतुका बोध होता है मानो खीर में किसी ने नोन मिला दिया हो या खिचड़ी मे मीठा और यह ऐसा खटकता है मानो स्वादिष्ट भोजन में बालू मिल गया हो। जाति मे जैसा मृग शशक आदि निर्बल चतुष्पद जीवो में पराक्रम का वर्णन और सिह और हिस्र जीवो मे साधु भाव। देश मे जैसा मरुस्थल अथवा सूने जंगल मे रम्यता का वर्णन हरे-भरे सुहावने देश में सन्नाहटा और उदासी दिखलाना। काल में जैसा हेमंत और शिशिर में जलबिहार। ग्रीष्म में पञ्चाग्नि सेवन। दिन मे दीपावली। पात्र मे जैसा ब्राह्मणता की प्रशसा शिकार खेलने में या युद्ध में क्षत्री मे शान्ति, शूद्र मे विद्यावैभव तपोबल उदारभाव दिखलाना, और भी ब्रह्मचारी या यती का ताम्बूल सेवन या दारोपसंग्रह बुढ़ापे में आशिकी और जवानी में वैराग्य। दरिद्र भूक्खड़ में अमीरी का ठाठ और उदारता आदि का वर्णन रसाभास है। और भी विद्या वय या ऊँच जाति वाला हर तरह पर उत्कृष्ट हो बिद्या वय या हीन जाति वाले निकृष्ट को बराबर की

प्रतिष्ठा या मान दे या अपने को उससे कम दिखलावे जैसा हंस को कौआ का आदर असमंजस और अरुन्तुद है वैसा ही इस प्रकार के रसाभास भी विदग्ध जन और रसिक समाज के मन को कष्ट पहुँचाते है।

रसाभास अनेक प्रकार से होता है जैसे शृङ्गार के वर्णन में वीभत्स या करुणा की कोई बात कह देना। आरम्भ से बराबर उत्साह और बीरसा का वर्णन चला आता है। लोगों के चित मे वीर रस छा रहा है किसी ने आकर दो चार ऐसी डरपोक बाते कह दी कि लोग पस्त हिम्मत हो गये लड़ाई करने का सब हौसिला जाता रहा। इसी तरह शात रस में रौद्र या शृङ्गार रस का वर्णन भी रसाभास है। इस प्रकार का रसाभास होने से सुन्दोपसुन्द न्याय के अनुसार दोनो रस बिगड जाते है। जैसे जहाँ शात रस का उद्गार सब ओर से छा रहा है किसी ने शान्ति में बाधा डालने को जोश और क्रोध दिलाना चाहा पर वहाँ तो चिरकाल से शाति छा रही है जोश और उत्साह मानो राख में होम के समान हो गया अब न शान्ति ही वहाँ जमने पाती है न जोश या उत्साह ही ने जड़ पकड़ा जो स्थायी होकर रहता। हमारा हिन्दुस्तान इस समय इसी रसाभास के रगड़े में पड़ा हुआ खराब खस्ता हो रहा है। हजार हजार तदबीर की जाती है कि शान्त रस को झाड़ू मार दूर बहावे; तितिक्षा क्षमा गम-खोरी पस्तहिम्मती भीरुता को भार में झोंक यहाँ के लोगों में उत्साह हिम्मत साहस उत्तेजना जोश पैदा हो जाय इसी के लिये तरह-तरह के उत्तेजक लेख लिखे जाते है। बड़े जोश खरोश के साथ लम्बी-लम्बी स्पीचें दी जाती हैं जगह-जगह कानफेरेन्स होता है प्रति वर्ष कानग्रेस किया जाता है भाँति-भाँति की कमेटी और क्लब स्थापित होते हैं पर चाण्डाल शान्त रस का असर यहाँ से हटाये नहीं हटता विदेशियों के मुकाबिले अपनी मानहानिपर

हमें कभी क्रोध आता ही नही अपना हक्क और सत्व पहचानना किसे कहते हैं जानते ही नही मजहब के जाल में फँसे हुये धर्म-रक्षा के लिये कहो प्राण दौडाले स्वत्व रक्षा (Rights and Pre-veleges) क्या है कुछ समझते ही नही। आस पास के मुल्कों मे दूसरी-दूसरी जाति के लोगो को ऊपर चढ़ते और सब भाँत की तरक्की करते देख यही मन मे आता है कि केवल अत्यन्त शान्ति ही के कारण यह रसाभास हम लोगो के बीच विद्यमान है और हटाये नही हटता जिससे देश का देश बुझी राख के समान निर्जीव हो रहा है। और भी ईसा के मत की पोल खुल जाने से पादरी साहब का वाँय-वाँय अब रसाभास है। होटल चल जाने से हमारे चौके मे अब रसाभास हो रहा है। नई सभ्यता के प्रचार से ब्राह्मणों की जीविका मे रसाभास है। चुगी के अधिक हो जाने से रोजगारियों के व्यापार मे रसाभास है। टैक्स की झोका-झोक और हर एक बहाने रुपये की खीच से महारानी के न्याय और प्रजा के सुख और आराम मे रसाभास है। भिखारियों के नित हाथ पसारे रहने से दानी की उदारता मे रसाभास हो जाता है।

नित्य प्रसारितकर करोति सूर्योपि सन्तापम्

गाई गीत को फिर फिर गाने की भाँत एक ही बात को पल्लवित करने से लेख में भी रसाभास होने की डर है इससे बस।

अक्टूबर १८८९

(१६) हिन्दुस्तान के रईस

अपने पूर्व संचित पाप कर्मों का भुगतमान भुगतने को जो हतभाग्य इस भारत भूमि मे हमे जन्म लेना था तो रईस पद-बाच्य कोई बड़े जमीदार तअलुकेदार छोटे-मोटे राजा या कोई बड़े महाजन क्यो न हुये ? घुँघुरवाली जुल्फों में सेरो अतर और फुलेल का सहार किया करते; कचभार और रत्नो का हार धारण कर गुडिया से बने हुए अमीरों की फिहरिश्त में नाम दर्ज कराये गद्दी पर बैठे-बैठे पान चबाया करते। हाँ मे हाँ मिलाने वाले खुशामदी लोग अहर्निश घेरे रहते हम उनकी झूठी तारीफ सुन मनमगन फूले न समाते। या तो रातो-दिन आठो पहर पूजा किया करते नहीं तो भाँड-भगतियों मे मिल रूपाजीवा वारवनिताओ के साथ चैन उडाते। दीन दुखिया आसामी या आश्रितो का धन चूस अमीरी का ठाठ गाडी घोडा शीशे आलात मे घर साज वैभवोन्माद का अभिमान प्रगट करते हुए फूले न समाते। दो चार अक्षर की उपाधि पाने को राजकर्मचारी हाकिमो की सेवा-टहल और भक्ति भावना में व्यग्र रहते; जिसमे दरबार मे कुरसी पावे और राज भक्तो की लिस्ट में हमारा भी नाम रहे। अपनी वर्तमान परतन्त्र दुःख दशा को सकल सुख की खान मानते; जैसे कुत्ता सूखी हड्डी चबाय अपने ही मुख का रुधिर चूस परम संतुष्ट होता है वैसे ही सिंह का सा पुरुषार्थ तो काहे को हम से हो सकता खाली घर ही में घेरौधा खेला करते, केवल अपना आराम और चैन को मुख्य समझते और उसमें जितना अपव्य होता कभी उसे बुरा न समझते, पर हाँ पबलिक सर्व साधारण के

हित में कभी एक पैसा भी जो चला जाता तो उस पर बड़ा पछतावा होता अब विचार कर देखो तो इन श्रीमंतों को हमें क्योंकर सुखी मानना चाहिये; इसमें सन्देह नही मनुष्य जीवन में सुख की खान विभव के ये आधार पात्र है किंतु उनका अनुराग उनकी बुद्धि सच्चे चिरस्थायी सुख की ओर कभी दौड़ती ही नहीं। ये उन्माद में आये दिन को रात और रात को दिन समझते है।

या निशा सर्वभूताना तस्यां जागर्ति सयमी।
यस्या जागर्ति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः॥

ये कुमार्ग को सुमार्ग और सुमार्ग को कुमार्ग मानते हैं, उसमें भी यदि कहीं तालीम की किंचित् झलक आ गई जैसा इन दिनो हो जाती है तब तो अगरेजियत और नई रोशनी की यावत बुराई सब इनके नस-नस मे व्याप जायगी, पुराने क्रम की जितनी बुराइयाँ विषय लम्पटता आदि उनकी ओर से घिन न आवेगी नई सभ्यता की बुराई भी अलबत्ता अग-अग मे प्रवेश कर लेगी। बोतल का काग एक क्षण भर के लिये हाथ से न छुटैगा। पुराने ढंग की भलाई हिन्दू धर्म पर चित्त से श्रद्धा अलबत्ता जाती रहेगी, आचार-विचार पर कुल्हाड़ा अवश्य है कि चलने लगे, संशोधन की और कोई बात हो चाहे न हो।

इनके कुत्सित आचरण देख कौन सा विचारवान् होगा। जिसके नेत्रो से आँसू न टपक पड़े परंतु क्या किया जाय ईश्वर हम से रूठा ही है कि भारत का उत्थान न होने पावे, नही तो जब और-और सभ्य देश के धनी कितने ही विषय लम्पट होंगे पर देश अनुराग जाति वात्सल्य में उदाहरण हैं, पर ये कुम्भकरण की घोर निद्रा मे सोये हुए हमारी लेखनी को शोक सागर में डुबाने का हेतु होते हैं। सुशिक्षा का सच्चा और वास्तविक बड़ा फल देशा-

नुराग है सो देश की पूरी भलाई तभी हो सकती है जब हम को अपनी रीति-नीति पर प्रेम हो तथा उसे अच्छा समझें। वंग देश और बंबई प्रांत के रहने वालों में शिक्षा का प्रादुर्भाव हमसे पहले हुआ, आदि में वे भी ऐसे ही भटक गए थे, अपनी रीति-नीति से बनाने लगे और विदेशियों की हर एक बात को अपने से श्रेष्ठ समझ स्वीकार कर लिया था; पर इनमे यह बात अब धीरे धीरे उठती चली जाती है। जहाँ बहुत से ऐगुण विदेशियो के उन्होने सीखे वहाँ विदेशियो का सा देशानुराग और मुल्की जोश तथा जातीयता का गौरव अपने में आना भी उन्होने कुछ कुछ सीखा जो हमारी होनहार तरक्की का बीजरूप है। हमारे यहाँ के उच्च श्रेणी वाले अंगरेजी शिक्षा की बकरत पाय लामजहबी शराबखोरी जिसे यूरोप वाले खुद आप बुरा कहते है अलबत्ता सीख गये; साहस, स्थिरता, धैर्य, आत्मत्याग, आदि उनके गुण एक भी न सीखा दैव को कुछ ऐसा ही मजूर है कि हम रोज नीचे को गिरते जाँय लाचारी है।।

फरवरी १९०१

(१७) दरिद्र की गृहस्थी ।

गृहाश्रमो हि निःस्वानां महत्येषा विडम्बना ।
तस्मात्पूर्वमुपादेयं वित्तमेव गृहैषिणा ॥

दरिद्र को गृहस्थी महा विडम्बना अर्थात् बडा जंजाल है । इसलिये गृहस्थी करने की इच्छा रखने वाले को चाहिये पहले धन संचय कर ले तब गृहस्थी मे आवे ।

वर सोढा मनुष्येण तीव्रा नरकवेदना ।
नत्वेवं च गृहे दृष्ट पुत्रदारक्षुधार्दितम् ।

कड़ी नरक वेदना सह लेना सहज है किन्तु द्रव्य के अभाव से स्त्री और पुत्रो का भूख के मारे पेट की अग्नि मे झुलसते हुए देखना नही सहा जाता ।

असम्भवे शिशु दृष्ट्वा रुदन्तं प्रार्थनापरम् ।
वज्रसारमय मन्ये हृदय यन्न दीर्यते ॥

जो किसी वस्तु के लिये गिड़गिड़ाते हुए बालको को देखता है पास धन न रहने से उनके मनोरथ को नही पुरै सकता और इस दुःख के कारण उसका हृदय नही फट जाता इससे जान पड़ता है वह मनुष्य बज्रसा कठोर हृदय है ।

साध्वीं भार्यां प्रिया दृष्ट्वा कुचैला क्षुत्कृशीकृताम् ॥
अस्य दुःखस्य तन्नास्ति सुख यत्समतां ब्रजेत् ॥

प्यारी सती भार्या को मैले फटे कपड़ो से किसी तरह तन ढांपे और भूखो मरते-मरते दुर्बल देख जो दुःख होता है उसका हमवजन कोई ऐसा सुख नही है जो उस दुःख का बदला चुका सके ।

रूक्षं विवर्णं क्षुधितं भूमिप्रस्तरशायिनम् ।
पुत्रदारं निजं दृष्ट्वा किमकार्यं भवेन्नृणाम् ।।

अपनी स्त्री तथा पुत्र को भूख से क्षीणकाय, रूखी देह धरती में पड़े लोटते देख उनके भरण-पोषण तथा तन ढाँपने के लिये कौनसा ऐसा बुरा काम है जो आदमी नही कर गुजरता ।

बाहूपधानं क्षुत्क्षामं दृष्ट्वा दीनमुख सुतम् ।
मृत्युरेवोत्सव: पुसा व्यसन जीवित द्विज ।।

क्षुधा से दुर्बल हाथ को तकिया बनाय लेटे हुये दीन मुख पुत्र और स्त्री को देख मनुष्य के लिये मरण महामगल हैं जीवन उसका संसार मे केवल दु:ख भोग्ने को है।

परिसीदत्स्वपत्येषु दृष्ट्वा दीनमुखी प्रियाम् ।
वज्रसार शरीरास्ते या न याति सहस्रधा ।।

लड़कों को दुखी और अपनी प्रिया भार्या को खिन्न और उदास देख जो जीता है अवश्य उसका शरीर बज्रसार सदृश कठोर है तब तो उसके हजारो टुकड़े नही होते ।

तस्मादर्थ विहीनस्य पुंसो दारपरिग्रहात् ।
कुतस्त्रिवर्गससिद्धिर्यातनैबहि केवलम् ।।

इससे धन हीन को गृहस्थी बाँध कर रहने मे धर्म अर्थ काम त्रिवर्ग साधन जो गृहस्थी का मुख्य फल है सो तो कही लेश मात्र को भी नही है बल्कि गृहस्थी केवल नरक यातना का भोग है। ऊपर के श्लोक भविष्य पुराण के है जिनमें दरिद्र के गृहस्थाश्रम का ठीक - ठीक चित्र उतारा गया है। सच है दरिद्र के लिये गृहस्थी बाँध कर बैठना ऐसा ही महा पाप का परिपाक है। किन्तु क्या किया जाय कुयें की भाँग है सब तरह की यातना लोग भोगते है कही से किसी तरह का सुख नहीं है तो भी कोई ऐसे

नहीं देखे जाते जिनको गृहस्थी से घिन हुई हो। रहने को घर नहीं है, पहिनने को कपड़े नही है, दिन-रात मे एक बार भी भर पूर पेट भर भोजन मयस्सर नही है ऐसे लोग भी गृहस्थी की ओर से कभी एक बार भी नही घिनाते। लड़के का व्याह आ लगा अवश्य ही करेंगे, भूखों मर रहे है तौ भी जायदाद गिरों रक्खैंगे कर्ज काढैगे पर लडके को ब्याहैगे जरूर ही। कुछ ऐसी निषिद्ध चाल चल पड़ी है कि क्वाँरा कोई रहने ही नही पाता। यदि किसी ने लड़के का व्याह न किया तो उसकी तारीफ कोई न करेगा बल्कि बिरादरी के लोग अङ्गुश्तनुमाइ करेगे और यही कहेगे कि अवश्य इसमे कोई राज़ है तब तो इसके लड़के का व्याह नहीं होता फिर जिनका व्याह होता है उनके लच्छन और सपूती देखो तो कोई ऐसी बात सिफ़त और तारीफ़ की उसमें नही है जिससे अनुमान हो कि यह अपनी गृहस्थी खातिरखाह चला लेगा। ऐसे अपाहिज जब गृहस्थ और लडके वाले हो बैठे तो वे क्या करैंगे, गुण कोई ठहरा नही जिससे वे अपना गुजारा करैं। भीख माँगैगे, चोरी करैंगे, हजार किस्म की बेइमानी करैंगे,

किमकार्यं भन्वेनृणाम् ।

ऊपर के श्लोकों में यह एक टुकड़ा बहुत ही समझ कर लिखा गया है। हम कहते है किसी के चार लडके है तो क्या जरूरत है कि वह चारो के गले मे चक्की बाँध उसका जीवन सत्यानाश करे। जिसको योग्य समझे और उसका मन गृहस्थी करने को चाहता हो तो उसका व्याह कर उसे गृहस्थ बनावे नही तो बाप माँ अपने लड़कों के भलाई चाहने वाले नही है वरन् पूरी शत्रुता उसके साथ कर रहे है। अस्तु, भरपूर धन पास हो तब बाप माँ अपने लड़कों का व्याह करदे तब भी कुछ ऐसी हानि नही है। धनी चाहे व्याह करते रुकै भी पर दरिद्र को हम देखते है तो जहाँ लड़के का व्याह आ लगा कि लार टपक पड़ी अवश्य ही व्याहैंगे

लड़कों को व्याह दिया मानो बड़ा बोझ सिर पर से टला। हिन्दुस्तान में भीखमंगे जो इतना बढ़े हुये है उसका कारण भी यही बाल विवाह है। पुत्र जन्म मे लोग बड़ी खुशी मानते हैं आनन्द सन्दोह मे मग्न फूले नही समाते; हमे रंज होता है कि जहाँ देश मे २८ करोड़ गुलाम और दास थे वहाँ एक और बढा, कहाँ तक इस दुख रोने को रोते रहै किसी एक के मन मे भी तो हमारी बात न धँसी अंधे के आगे रोना अपना दीदा खोना है। लाचारी है क्या किया जाय इस वर्ष के कड़े दुर्भिक्ष ने गृहस्थाश्रम की अच्छी तरह कलई खोल दी इस दुर्भिक्ष मे अन्नकष्ट भोग कर भी जो गृहस्थ बनने का हौहिला रखते हो उनके समान पाक बेहया और कौन होगे। जिस बेहयाई का नमूना यहाँ देश का देश हो रहा है। जो इन बातो से प्रत्यक्ष है कि इस वर्ष भी ऐसे कराल दुर्भिक्ष में लोग अपने लड़को को व्याहने से न चूके सिंहस्थ में भी स्वार्थी ब्राह्मणों ने ऐसी लगन निकाल दिया कि शादियो का शुमार और साल के मुकाबिले कम न रहा। दरिद्र भारा क्रान्त भारत बसुधा का हम नही जानते अब और क्या अनिष्ट भावी है जो अपाहिज निपागुर इन गर्दखोरो की गृहस्थी बढ़ती ही जाती है। हम गृहस्थाश्रम की निन्दा नही करते गृहस्थी सब सुख की खान और मनुष्य जाति की उन्नति का एकमात्र द्वार है किन्तु इस चलन की गृहस्थी को हम कभी न सराहेंगे जैसी हम लोग भुगत रहे है। देखते है तो समाज मे धनियो की संख्या नित्य-नित्य घटती जाती है सो भी इसी लिये है कि दस-बीस वर्ष के बीच मे एक दो धनी विभवशाली बंश क्षीण हो जाते है। पर ये धनहीन दरिद्री जो रूपया पास न होने से व्यभिचार तथा बेश्या संसर्गदूषित न हो सृष्टि पैदा करने की शक्ति में कम नही होते एक एक के छः सात से कम औलाद नही होती परिणाम में ऐसों की संख्या आबादी में बढ़ती जाती है सम्पन्न

समर्थों की गिनती घट रही है। भारत के दरिद्र हो जाने का यही बड़ा भारी कारण है इसी से ऊपर के श्लोको में सिद्धान्त किया कि पहले धन सचय कर तब गृहस्थी मे आवे। अत्यन्त दूधमुहे का ब्याह न किया जाय तब भी कुछ भलाई इसके बारे में हो सकती है किन्तु जगत् प्रवाह मे पड़े हुये लोग कब हमारी सुन सकते है हम चाहे जितना गला फाड़-फाड़ चिल्लाया करे।

इस अपनी मूर्खता और नासमझी का परिणाम जो कुछ हो रहा है उसे कोई न मालूम करता हो सो भी नहीं है। सभी इस का फल भुगत रहे है और पड़े-पड़े कांख रहे है। किन्तु भेड़िया धसान तो है हिन्दू समाज का अवलम्ब ही है। जिसके विरुद्ध चलना कैसा वरन् मुखसे कभी एक बात भी निकालना बडी बुराई है। भीतर ही भीतर चूरचूर होते रहो पड़े-पड़े कॉखा करो किन्तु समाज मे सुर्खरुई चाहते हो तो अपने "मारेल-करेज" को दखल न दो। इस विषय को पिष्टपेषण की भाँत हम न जाने कै बार लिख चुके समझते है कि पढ़नेवालो को अरोचक होगा किन्तु फिर भी नही रहा जाता कुछ न कुछ लिख ही डालते है। पढने वालो से प्रार्थना है कि हमें माफ़ करेंगे॥

जुलाई १८९७

[१८] एक अनोखा स्वप्न

अकाल महामारी आदि अनेक भयंकर बड़े-बड़े उत्पात देख कल रात को पड़ा-पड़ा मैं सोच रहा था कि यह संसार केवल दु:ख का आगार है पर यहाँ के रहने वाले प्रमाद मदिरा का पान कर ऐसा उन्मत्त हो रहे हैं कि अपने अपने को सभी सुखी माने हुए हैं और यह निश्चय नहीं होता कि वास्तव में कोई सुखी है या नहीं।

इस-इस तरह का ऊहापोह मन में कर ही रहा था कि एक बारगी गहरी नींद ने मुझे ऐसा आ दबाया कि उसके अत्यन्त वश में हो यह अनोखा स्वप्न देखने लगा। मुझे जान पड़ा कि मैं एक ऐसे ऊँचे पर्वत के शिखर पर बैठा हूँ जहाँ पवन का भी गम्य नहीं है मेघ जिसकी ऊँचाई तक न पहुँच बीच ही में लटके रह जाते हैं। मैं इस बात के अचरज में हुआ कि हे परमेश्वर मैं यहाँ कैसे आ पड़ा और अपने चारों ओर नजर उठाय देखा तो सैकड़ों कोस के चौड़े मैदान चौड़ी लम्बी झीलें बड़े-बड़े शहर जिनमें लाखों मनुष्य बसते हैं दिखाई दिये। एक ओर सभ्यता के छोर तक पहुँचे हुए राजा महाराजा, सेठ साहूकार वैभवोन्माद में उन्मत्त अपने अपने चित्त के अनुसार हर तरह का ठाट ठटे हुए फेशन परस्ती के पीछे परेशान संसार के सुख की सीमा अपने ही में मानते हैं एक ओर कङ्गाल किसान अपनी गरीबी के अभिमान में भूला हुआ थोड़े से खेत और फूस की झोपड़ी से सन्तुष्ट राजा महाराजाओं की सम्पत्ति को भी तुच्छ कहता हुआ अपने को परम सुखी माने हुए है। इस बात को

सोच कि विश्वम्भर जगत् कर्ता ने मनुष्यों को उनकी अवस्था के अनुसार सबो को सुखी और प्रसन्न किया है मुझे बड़ा हर्ष हुआ परन्तु जब यह ध्यान आया कि उनका यह सुख चिरस्थायी नहीं है और सृजित पदार्थ मात्र की दशा सदा एक सी नहीं रहती तब उदासी ने मुझे फिर आ दबाया। देर तक इसी एच-पेच में पड़ा था कि इसमें सचमुच सुखी कौन है और इन सब देशो को जिन्हें मैं अपने नेत्रगोचर कर रहा हूँ सच्चा सुख किसके बाँट में पड़ा है जहाँ जाकर सुख और आराम की खोज में बहुत दिनों से भटकते हूए मेरे आत्मा को विश्राम मिले। पर ऐसा ठौर इस संसार में कहाँ है और जब कि सभी अपने अपने को सुखी मानते हैं तो कौन कह सकता है कि यही स्थान सफल सुख की खान है। मारे शीत के ठिठुरे हुए पोलैण्ड लैपलैण्ड नारवे आदि देशों के रहने वाले मानते हैं कि सुख की खान हमारा ही देश है। सूर्यदेव की खरतर किरणों से अति तप्त अफरीका ऐसे पृथ्वी के उष्ण कटिबन्ध के अत्युष्ण देश के निवासी कृष्ण वरण हवशी भयङ्कर गरमी से तड़प रहे हैं पर वे भी यही कहते हैं कि सुखी हमी है। यह सब भिन्न-भिन्न भूभाग के रहने वालों का अपने अपने देशों पर अनुराग देख उस समय मुझे यही निश्चय हुआ कि निज जन्मभूमि ही सच्चा सुख उत्पन्न करने वाली है। क्षण भर के उपरान्त फिर मुझे ख्याल हुआ 'नही-नही' यह मैंने क्या निश्चय किया यह तो स्वदेशानुरागियों का केवल पक्षपात मात्र है कदाचित् इसी से यह कहावत चल पड़ी है 'नीम के कीड़े को नीम ही भाती है।' इससे सो यह निश्चय नहीं हो सकता कि सुखी कौन है। इतने में मुझे ऐसा जान पड़ा कि कोई आकर मेरे कान में यह कह रहा है यहीं बैठा-बैठा मनसूबा गाँठता रहेगा। हाथ कङ्गन को आरसी क्या तेरे नेत्र के सामने सब प्रत्यक्ष है नीचे उतर प्रत्येक

देशों की बातों को अच्छी तरह जाँच इसका निर्णय क्यों नहीं कर डालता।

इस आकाश वाणी के सुनते ही मैं चौंक पड़ा और ऊँचे पर्वत से धीरे-धीरे उतर उसी बात की धुन में मौन साधे घूमने लगा और अनेक विचित्र लीलायें देखा उन सबों का स्मरण तो मुझे नहीं है उनमें दो चार बातें जो अब तक नही भूलीं और अचरज के कारण चित्त में खचित - सी हो रही हैं उन्हें आपको कह सुनाता हूँ। भ्रमण करते करते ऐसे लोगों के समूह में जा पड़ा जिनकी धूम धाम और चमक दमक देख चकाचौधी सी आने लगी चित्त चकित हो गया। सैकड़ों मनुष्य हाथ बाँधे जिनकी प्रतीक्षा में खड़े रहते हैं जिनका एक बार उनकी ओर आँख उठा कर देख लेना भी मानो बड़ी कृपा समझी जाती है। सर्बाङ्ग जिनका सुवर्ण और बहुमूल्य हीरा जवाहिरों से लसा हुआ है, तनसोहनी मनमोहनी तरुणी जिन्हें सब ओर से घेरे हुये हैं, जिनका सुमधुर कोकिललाप करणेन्द्रिय को परम सुख दे रहा है। बन्दीजन हाथ बाँधे सामने खड़े बिरुदावली गा रहे हैं। दिल्लगीबाज मसखरे हाँ में हाँ मिलाने वाले खुशामदी चाटुकार विटचेट विदूषक भाँड़ भगतिये चारो ओर जमा हैं रमूज़ और झूठी तारीफों से जी खुश कर रहे हैं। जिनकी प्रसन्नता पूर्वक मन्द मुसकियान और स्नेह युक्त कटाक्षपात में कुबेर की संपत्ति बसती है और क्रोध युक्त कराल भ्रूविक्षेप में महाकाल मृत्यु को प्रगट होते देर नहीं लगती। इस-इस तरह की विचित्र-विचित्र लीलायें देख मैंने अपने चित्त में यही स्थिर किया बस सुख की पराकाष्ठा यही है। इतने में एक स्त्री ने जाने कहाँ से आय मुझे अत्यन्त विनीत भाव से प्रणाम कर बोली—महाशय, कहिये आपने क्या देखा और सब देख भाल जो कुछ आपने निश्चय किया वह आप की बड़ी भूल है। ये

सब मेरे बड़े भक्त और अनुरागी हैं इन्हें मैं अपना खिलौना बनाय जैसा चाहती हूँ वैसा खेल खेला करती हूँ नाम मेरा अविद्या है—अशांति, स्वार्थपरता, निष्ठुरता, लोभ, मोह, बैर, फूट, इत्यादि कई एक और भी मेरे भाई-बहन, सखी-सहेली हैं जो सदा मेरे साथ रहती हैं जहाँ मैं जाती हूँ वहाँ ये सब भी पहुँच अपना डेरा छोड़ देते है। इन्हें आप सुखी मत समझें ये सब बड़े स्वार्थपर अविवेकी और निठुर है बहुत दिनों से मेरी उपासना करते-करते उन्हे ज्ञान ही न रहा कि सोच सकें कि चिरस्थायी सच्चा सुख इस ससार मे क्या है। अपना सुख और आराम इनका सिद्धान्त है सर्व साधारण प्रजा मात्र का लाभ और उपकार क्या वस्तु है सो ये जानते ही नही शरीर इनका हीरा जवाहिरो की जगमगाहट से चमक रहा है पर हृदय में गाढ़ा अन्धकार छाया हुआ है। महाशय ! जब तक मै अपना अधिकार इनके बीच दृढ़ता के साथ जमाये हुये हूँ तब तक किसी तरह इनकी कुछ भलाई की आशा ही आप न करै और इन्हें बड़ा सुखी जो आपने मान रक्खा है इस सिद्धान्त को जलाञ्जलि दीजिये। इनकी यह सब रौनक और चमक-दमक केवल ऊपर से देखने ही को है भीतर-भीतर पोले और जर्जरित हो रहे है। स्वच्छन्दता का सुख इन्हे अणु-मात्र भी नही है ये कहने ही को राजा है राजस्व और क्षत्रियत्व का आभास-मात्र बच रहा है। इनमे एक भी ऐसे नही जिनको ब्रिटिश शासन सब ओर से आक्रमण न किये हो और जो ब्रिटिश सिह के पंजे से छुटे हों। एजेंट साहब की खुशामद और सेवा मे सदा तत्पर रहते है जिसमे कही ऐसा न हो कि प्रबन्ध में किसी तरह की खुचुर निकाल लाट साहब को लिख भेजें और हमारी प्रतिष्ठा में दाग लगे पदच्युत कर दिये जाँय। कोई आपस के घरैलू भाई बन्धु पट्टीदारी के झगड़ों में फँसे फिकिर में चूर

चूर हैं। कोई सब राजपाट का विलसने वाला अपने उपरान्त उत्तराधिकारी वलीग्रहद न देख राज-पाट विभव-सम्पत्ति सब फीकी मान रहे हैं। कोई ऊँची सी ऊँची पदवी और दरबार में प्रथम श्रेणी की कुरसी पाने की फिकिर में व्यग्र हैं। बहुत ऐसे भी हैं कि केवल अपना आराम और सुख चाहते हैं लाखों अपने आश्रितों की कुछ भलाई का ख्याल कभी एक मिनिट के लिये नहीं होता। लोग कर्मचारियों के अत्याचार से पीड़ित चीत्कार मचाये हुये हैं पर उन्हें शरण देने वाला कोई नही देख पड़ता।

यह सब भीतरी बातें देख ऐसे सुख को धिक्कारते उस सुन्दरी से मैंने कहा देवी, मुझे अच्छी तरह अनुभव हो गया अब मैं कभी इस प्रकार के सुख को सुख न मानूँगा—आज्ञा दीजिये मैं कहीं अन्यत्र जाकर सुखी कौन हैं इसकी खोज करूँ। उसने उत्तर दिया—जाओ, पर मैं तुमसे इतना कहे देती हूँ कि इस शापित देश हिन्दुस्तान में इसकी खोजने की चेष्टा करना व्यर्थ है। यहाँ के रहने वालों की ऐसी करनी नही हैं कि वे सच्चे सुख के अधिकारी हों। इतना कह वह अन्तर्ध्यान हो गई और मैंने भी अपनी राह ली। घूमते-घूमते ऐसे स्थान में जा निकला जहाँ की पृथ्वी उस देश के अत्यन्त शीतल होने से अनुर्वरा और पर्वत स्थली है पर वहाँ के परिश्रमी और साहसी निवासियों के कारण स्वर्ग-भूमि को तुच्छ करती है। जहाँ के नगरों की प्रासाद पङ्क्ति इन्द्रपुरी अमरावटी की स्पर्द्धा कर रही है जहाँ के लोग सभ्यता, शिक्षा, शिल्प, विज्ञान और फेशन में लोकोत्तर हो जगत् भर के शिक्षागुरु बन रहे हैं। जिसके विक्रम, वैभव और समृद्धि की तुलना करने को अवनीतल के कोई देश समर्थ नहीं हैं। जहाँ की सफाई, शिल्प-चातुरी, वाणिज्य, युद्ध-विद्या, नीति-पटुता, अपनी अन्तिम सीमा

को पहुँची हुई है। जहाँ की भाषा सम्पूर्ण भाषाओं का रसाकर्षण कर दर्शन इतिहास उपन्यास चरिताख्यान विज्ञान का भाण्डारगृह हो रही है। जहाँ के लोगों का क्षोभ यहाँ तक बढ़ रहा है कि समस्त भूगोल हस्तगत होने पर भी लोभ एक सीमा तक नहीं पहुँच सकता। यह सब देख मेरे मन में आया कि निःसन्देह इससे बढ़ कर कोई दूसरा ऐसा भाग्यशाली देश न होगा सकल सुख की खान यही है। यह सब अपने मन में कह ही रहा था कि मानो किसी ने आकर मेरे मन में कहा बन पड़े की सभी बात अच्छी होती है। तुम्हें अभी बहुत कुछ देखना है मत किसी सिद्धान्त पर आरूढ हो कूपमण्डूक बनो। इतने में मेरी आँख खुल गई भोर हो गया सूर्यकी किरणें मानो हाथ पसार-पसार मुझे उठा रही है। पाठक, जिस बात की खोज में था उसका निश्चय तो न हुआ पर इस स्वप्न के देखने से आनन्द बड़ा मिला। आशा है आपको भी यह लेख पढ़ कुछ सुख मिलेहीगा।

जनवरी १८९७

(१९) नई सभ्यता की बानगी

मैं बहुत दिनों से फेर में पड़ा था कि सभ्यता किसे कहते हैं। कई एक डिक्शनिरियाँ उलट-पुलट खूब छान-बीन की पर कहीं इसका पता न लगा। सभ्य लोगों के व्याख्यान और स्पीचों की बड़ी जाँच की वहाँ भी इसका सूराग़ न लगा। मन में आया किसी पण्डित या मौलवी से पूछें तो कदाचित् मेरा मतलब निकल आवे। इसी सोच-विचार में था कि अकस्मात् एक नई रोशनी वाले से भेंट हो गई। देर तक चुनाचुना के उपरान्त मैंने उनसे पूछा—"भाई मुझे एक बात की शङ्का है हल कर दीजिये तो आपका बड़ा गुन मानै।" नई रोशनी वाले बाबू साहब बोले "तुम लोग बड़े बेवकूफ होते हो। आज मुझे फुरसत नहीं है—किसी एतवार को आना तो बतला देगे।" मैंने कहा—"थोड़ी सी तो बात है आप ध्यान लगा के सुनो तो कहूँ।" बाबू साहब बोले—"तुम लोगों से बातें करना अपना अनमोल समय व्यर्थ गँवाना है। खैर, आज यही सही पर तुम मेरे साथ साथ चले चलो तो शायद मै तुमसे बात करता चलूँ जिसमें मेरे वकिङ्ग में खलल न पड़े'। गर्जमन्दा बावला मैंने सो भी मजूर कर लिया। बाबू साहब आँधी - सा भागने लगे मैं उनके पीछे पतङ्ग का पुछल्ला सा लगा हुआ हाँफते - हाँफते पूछा कि "सभ्यता किसे कहते हैं ?' उन्होने कहा—'तुम्हारा सवाल बड़ा पेचीदा है मेरे साथ चले आओ अपने बङ्गले पर पहुँच इसे हल करूँगा।'

खैर, ज्यों-त्यों किसी तरह बंगले पर पहुँच बाबू साहब छोटी हाजिरी के लिये डाइनिंग रूम में घुस गये। मैं बाहर बरामदे में एक कुरसी पर जा बैठा। थोड़ी देर में रुमाल से मुँह

पोछते बाबू साहब बाहर निकले और थके-थकाये टट्टू की तरह बरामदे में टहल-टहल बोले—'वेल ! सभ्यता के बारे में आपने पूछा था इसके क्या ठीक माने हैं सो तो मै नहीं बतला सकता पर जो उदाहरण मैं देता हूँ उसी से समझ जाइये। ' फ्रीडम' अर्थात् स्त्री और पुरुष दोनों परस्पर स्वतंत्र और निरपेक्ष बल्कि साहब और मेंम दोनो की स्वतंत्रता तराजू पर तौलने से मेम साहबा की आजादी का पलरा झुका हो। एक उमदा नमूना सभ्यता का यह भी है कि मेम साहब एक दिन भी रंड़ापे का दुख न उठाने पावें। मियाँ इधर कबर में पहुँचे बीबी साहबा के लिये दूसरा तैयार। दूसरे स्त्रियों को परदे में रखना सभ्यता में बड़ा भारी धब्बा है। सभ्यता जब जोर पकड़ती है तब पुरानी बात और पुराने ख्याल से घिन पैदा हो जाती है। जोश और तेज मिजाजी बे तरह तबियत में जगह कर लेती है। मनुष्य की विवेचना शक्ति (Conscience) पर वह बारीक सान धर जाती है कि ईश्वर के अस्तित्व तक में उसे सन्देह होने लगता है और मजहबी वसूल तो उस बारीक सान में कट-फट सौ टुकड़े हो जाते हैं और एक बात बड़ी गुप्त हम तुमसे बतलाये देते हैं उसे अपने मन ही में रखना वह यह कि वाइन सब सभ्यता का सार है बिना जिसके सभ्यता कभी शोभा देही गी नहीं। सभ्यता क्या है उसे अधिक जानना चाहो तो मिसटरीज़ आफ़् लण्डन और पेरिस पढ़ो। बाबू साहब और भी तीन-चार किताबों का नाम अट-सट गिना गये।

सभ्यता की इन सब बातों को सुन मैं सन्नाटे में आ गया। पर मेरे चित्त को सन्तोष न हुआ ख्याल में आया किसी मौलवी से भी इसे पूछूँ। शाम को एक मस्जिद के पास जा निकला और जो हज्ज किये हुये बड़े नमाज़ो आबिद मालूम हुये उनको जा घेरा और नम्रभाव से उनसे पूछा—

"मौलवी साहब ! मैं आपको थोड़ी तकलीफ़ दिया चाहता हूँ मुझको आपसे कुछ पूँछना है।" मौलवी साहब बोले—"कहो क्या पूछते हो।" मैंने कहा—"सभ्यता किसे कहते हैं ?"

मौलवी साहब चकरा गये कहने लगे—"मैं नहीं जानता तुम्हारी शैतानी काफ़िरों की जबान में यह क्या लब्ज़ है। मुझे समझाओ तो शायद तुम्हारा मतलब हल कर सकूं।" अब मुझे और भी कठिनाई आ पड़ी कि मैं उन्हें किस भाँति समझाऊँ। थोड़ा सोच बोले—"किसी जमात के दस्तूर या चलन को सभ्यता कहते हैं।" उन्होंने कहा—"भाई ! हम लोगों में तो यही दस्तूर है कि हिन्दू जो करते हों उसका उलटा और बरक्स करना, निहायत मैले और कसीफ़ रहना, नहाने-धोने का कोई काम नहीं पर नमाज दिन में ६ दफे पढ़ना, शराब न पीना पर मदक और चण्डू में कोई हर्ज़ नहीं, बेवा की शादी हमारे यहाँ मना नहीं है पर दूसरे की खूबसूरत बहू बेटी देख पड़े तो उसे छीन लेने में कोई हर्ज़ नहीं और इसके बारे में मालूम करना हो तो लखनऊ या दिल्ली चले जाइये।"

इनकी बातें सुन मन में आया कि अब पण्डितों से पूछना चाहिये। काशी चला गया और मणिकर्णिका पर जा बैठा। एक पण्डितजी धोती ढीले, सुंघनी का बेल हाथ में लिये, नंगे सिर, दुपट्टा कंधे पर धरे देख पड़े। मैं अति विनती भाव से प्रणाम कर बोला—"आज्ञा होतो मुझे कुछ जिज्ञासा है पूछूँ। मैं प्रयाग से काशी का नाम सुन आया हूँ।" पण्डित जी ने कहा—"आप धन्य हो इतना श्रम उठाय यहाँ आये हो। कहिये आप का क्या प्रश्न है ?" मैंने कहा—"पण्डितजी सभ्यता किसे कहते हैं ?" पण्डित जी सुंघनी सूँघ न जाने कितने श्लोक पढ़ गये। मैंने कहा—"महाराज ! मुझे इतनी धारणाशक्ति नहीं है कि इन श्लोकों को याद कर सकूँ मुझे थोड़े में समझा

दीजिये।" पण्डित जी ने कहा—"सभ्यता समाज के शुद्ध आचरण को कहते हैं और यह अत्यन्त गर्हित है जैसे अब के नवयुवक पशुओं के आचरण योग्य काम को सभ्यता समझे हुये हैं। सभ्य हमारे रघुकुल मुकुटमणि श्रीरामचन्द्र और धर्मराज युधिष्ठिर महाराज थे। युग बदल गया, ब्राह्मणों पर श्रद्धा लोगों को न रही, धर्म के विरोधी सब हो गये, घोर कलियुग आने वाला है।" पण्डित जी की ये बातें सुन मैं सोचने लगा तो क्या अब देश का देश असभ्य और अधम हो गया। सभ्यता कही रही न गई। जिससे पूछो वह अपनी ही गीत गा गये। सभ्यता चलन बाजार है जिसमें छोटे बड़े सभी नधे हैं। इतना अवश्य कहेंगे सभ्यता निरी चूना पोती कबर है जिन्हें लोग सभ्य कहते है उनके भीतरी आचरण देख घिन होती है। हमीं अच्छे जो ऐसी घिनौनी के डांड़े नहीं गये।

दिसम्बर १६०६

[२०] दम्भाख्यान

इस संसार महा गहन बन में सब ओर घासफूस से ढँपा हुआ दम्भ एक ऐसा अन्धा कुआ है जिसमें मुग्ध कुरंग समान भीड़ के भीड मनुष्य निरावलंब गिर कर नित्य नष्ट होते रहते हैं। आपका मन इस अन्धे कुँये का पूरा दास्तान सुनने और दंभ देव के पुजेरियों से मिलने को ललकता हो तो हमारे साथ हो लीजिये चलिये हम इसका तमाशा आपको दिखावें। जल में मछली के समान दांभिक जन कितनी तरह की चाल चलना जानते हैं सब को एक साथ गिना कर आप को बतला देना तो हमारी अल्प बुद्धि के बाहर है किन्तु जहाँ तक बन पड़ेगा कोताही न करेंगे। एक समय जब ब्रह्मा जी सब सृष्टि पैदा कर चुके और नेत्र फैलाय के देखा तो मनुष्यों को बिना किसी अवलंब के पाय सोचने लगे सृष्टि तो बड़ी उत्तम रचा गई किंतु ये सब लोग जो सदा ऐसे ही सीधे - सादे निरे भोंदू दास बने रह गए तो मेरा सृष्टि पैदा करना व्यर्थ हुआ सो अब क्या करूँ जो इनमें चुस्ती और चालाकी आवे।

यह सब सोचते ही रहे कि अकस्मात् न जाने कहाँ से एक आदमी एक हाथ में बहुत सा कुशा और दंड लिये दूसरे में कमण्डलु, मृगचर्म ओढ़े, विभूति रमाये, कई तरह की माला पहने, मौन अवलंब किये पर हुँकार से ब्रह्मा के पास बैठे हुए मुनियों को डाँटता आ खडा हुआ। ब्रह्मलोक में भी छुआछूत के विचार से और हम सर्व श्रेष्ट होकर पहिले बिना ब्रह्मा के अभ्यु-त्थान के बैठ जायँगे तो बड़ी अप्रतिष्ठा होगी इस खयाल से खड़ा

ही रहा। इसके रोब में आ कर ब्रह्मा अपने आसन से उठ खड़े हुए अगस्त मानो इसके तेज से ग्रस्त से हो गये। बशिष्ठ अपने तपोबल को इसके सामने तुच्छ मान इसके वश में हो गये। कौत्स को अपनी सरल तपस्या पर नितान्त कुत्सा हो गई। आडंबर रहित अपने को देख नारद अपनी आत्मा का निरादर करने लगे। भृगु की सब तपस्या भग्न हो गई। ब्रह्मा ने कहा आप अच्छे आये हमारी सृष्टि में ऐसे एक तेजस्वी पुरुष की बड़ी आवश्यकता रही आइये आप हमारी जाँध पर विराजमान हों। यह नाक भौ सिकोड़ते पहिले ब्रह्मा की जाँध को गोबर से लिपवाय जा बैठा और बोला महाराज आप बहुत ऊँचें स्वर से न बोला करें हाथ का इशारा मात्र बहुत है और यदि बोलो भी तो हाथ से मुख ढाँप लिया करो जिसमें स्वास के साथ मुख की भाफ से मेरा शरीर अशुद्ध न होने पावे। इसके इस छुआछूत के विचार और अद्भुत आचार से ब्रह्मा तङ्ग हो हँस कर बोले हम जान गए तुम दंभ हो; उठो यह सम्पूर्ण समुद्रान्त पृथ्वी तुम अपनी ही समझो इसका सुख भोगो देवता लोग भी तुम्हारा तत्व न समझ सकेंगे। ब्रह्मा की आज्ञा पाय ससार के जीवों को अपने दंभ बल से अज्ञान तिमिर से झोंकता हुआ ब्रह्मलोक से नीचे उतरा और पृथ्वी के प्रत्येक प्रान्त में घुम-घूम सब ठौर अपना वैभव स्थापित करने लगा। चौके में पञ्च पौड़ों के दंभ आ कर घुसा चूल्हे में धूर्त कनौजियों के। केवल नहान और अपरस में कपटी नागर और गुजरातियों के। सोला में मूढ़ मालवीयों के। अर्थज्ञान सून्य पाठमात्र वेद जानेने में मूर्ख महाराष्ट्रियों के। कलप किये धोये रील के चमकते जनेऊ में छोटलिये बङ्गालियों के। रोजा और नमाज में तअस्सुबी मुसल्मानों के। रूप कसने में भिखारी पंडे देवलक और मंदिर के पुजेरियों में। मौन साधने में गौं से चलने वाली गवर्नमेंट के। शमले में अमले और वकीलों के। फैशन में नई सभ्यता के।

नम्रतापूर्वक गिड़गिड़ाने में कदर्य और कृपण महाजनों के। वाक् चपलता में पण्डितों के।

पाण्डित्ये चापलं वचः।

——घूंघट में कुलटाओं के।

अति विनयवामनतनुर्विलंघ्यते गेहदेहली न वधू।
अस्याः पुनरारभटी कुसुंभवाटी विजानाति।

चार घड़ी के तड़के माघ तथा कार्तिक के नहाने यात्रा या दर्शनों में चपल जघनाओं को मर्दाने भेष में हमारी चालाक माई जी के। मंत्र-तंत्र टोना-टनमन में तांत्रिकों के। जटाजूट और लम्बे तिलक में सन्त-महन्तों के। इत्यादि; विविध नामरूप से दाम्भिक जन लोगों को ऐसा फँसाने लगे जैसा मदारी अपने मन्त्र बल से साँप को। राम के तान से व्याध हिरन को फँसा लेता है। बगुला यावत् दाम्भिकों का सिरताज है और विलार तो मानो दाभिकों का चक्रवर्ती है। लोभ इसके बूढ़े बाप है माया इसकी माँ है फूट और कपट सहोदर भाई है, हुकार इसका पुत्र है वञ्चकवृत्ति इसकी समानशीला स्त्री है परिवार समेत दम्भदेव ब्रह्मा की आज्ञा का पालन करते सब ठौर घूमते फिरते है जीव कोटि मे जन्म धारण कर जो इसके चगुल मे न आया वह धन्य है। दम्भ मक्कारी हिपोक्रिसी छल कुटिलाई बनावट पालिसी आदि बिविध नाम रूप से यह ग्रहण किया जाता है।

ससार के कोई ऐसे काम न होगे जिसमे दंभ की थोड़ी छाया न आ पड़ती हो पर मजहब या धर्म के सम्बन्ध में तो बिना दम्भ के कभी चलता ही नही। यूरोप के एक प्रसिद्ध विद्वान् का निश्चय है कि मजहब की बुनियाद केवल दम्भ है और मत चलाने वाले सब दाम्भिक थे थोड़ा या बहुत सबों ने दम्भ का सहारा लिया है नही तो पृथ्वी पर इतने प्रकार के जुदे-जुदे मज़हब क्यों होते।

सच तो यों है कि संसार की चलाने वाली यह दम्भरूप जीवनी शक्ति इससे अलग कर ली जाय तो उचाट और ऊब पैदा करने वाले सूने जंगल के समान इस जीव लोक में फिर रही क्या गया सिवा सब ओर सन्नाटा ही सन्नाटा। यहाँ जो कुछ गुलजारी और रमणीयता है वह सब केवल दम्भ की झलक है।

हम पहले लिख आये है कि माया दम्भ की जननी है माया को सांख्यदर्शन वालों ने प्रकृति कहा है और यह प्रकृति ही का अधिष्ठान है जिससे ब्रह्मा या जीव में चेतना होती है तभी सृष्टि निर्माण चातुरी भी उसमें आती है अब आप समझ सकते हैं कि किस तरह दम्भ का लगाव सृष्टि के आदि ही से संसार के साथ लग गया है और बिना जिसकी झलक आये समाज में आप रूखा कठोर कटुवादी और अशिष्ट कहे जायेंगे। जी तो यही चाहता है कि आप से बोलने की कौन कहे आपकी सूरत न देखें आपकी गन्ध तक हमारे पास न आवे किन्तु अपना भीतरी भाव छिपाते हुए मिलने पर हँसकर दम्भ का आदर करते हुए आपसे न बोलें राम रामौअल न करें गरुरी समझे जाँय कोई मुख से न बोलै संसार में रहना कठिन हो जाय। इत्यादि, भाँति-भाँति के रूप रङ्ग से संसार को चलाते हुए दम्भदेव प्रकाशमान हो रहे है।

अक्टूबर १८८६

(२१) एक अशरफी का आत्मवृत्तान्त

आधी रात बीत चुकी थी १३ या १४ मिनट हुये होंगे कि बारह की गजल चारों ओर सुनाईं देने लगी; सब सूनसान था परन्तु मुझे अभी तक निद्रा न आई बहुत जी ऊबा तो उठ बैठा पास मेज पर एक अखबार पड़ा था उठा लिया और चाहा कि लाओ इसे ही पढ़ें कि किसी तरह बख्त तो कटै। पासही उस अखबार के देखा तो एक अशरफी पड़ी है; उनींदासा तो था ही मुझे ऐसा मालूम हुआ कि वह अशर्फी अपने कगर के बल खड़ी हो गई और मेरी ओर मुँह कर खखारने लगी—मैं इसी अर्द्धनिद्रा की दशा में इस अनोखे शब्द को सुन बड़ा चौकन्ना हो ध्यान दै जो शब्द वहाँ से निकले सुनने लगा और अशरफी ने अपना निज वृत्तान्त इस तरह पर कह सुनाया।

मैं एक पहाड़ की कन्दरा में जो अमेरिका के पीरू नामक देश के निकट है पैदा हुई और शिला रूप में सर फ्रांसिस डेक के साथ जहाज पर बैठ इङ्गलैण्ड पहुँची। जहाँ पहुँचते ही मैंने अपना चोला तज सफाई शाइस्तगी और चमकदारी का जामा पहिना; ठाट-बाट मेरे बिलकुल अङ्गरेजी हो गये; महारानी एलिजबेथ मेरे एक ओर और देशी अस्त्र-शस्त्र मेरे दूसरे ओर रहने लगे। तब तो मेरी इतनी कदर हुई कि सबों को मेरे पाने की इच्छा होती थी। अब मुझमें चञ्चलता और घूमने की खाहिश बहुत ही बढ़ गई। मैं रोज नये-नये देश की सैर करने लगी और नये-नये लोगों से मेरी मुलाकात भी बहुत बढ गई। मेरा अच्छा शील स्वभाव होने से लोग मुझसे ऐसा प्रसन्न थे कि पल-पल में मैं न जाने कितने मनुष्यों से हाथ मिलाती थी। जब मेरी अवस्था

पाँच वर्ष की हुई मैं इङ्गलैण्ड के हर एक हिस्सों में घूम चुकी थी। छठवें बर्ष मेरे बड़े ही निकृष्ट ग्रह आये और मैं एक कंजूस के पाले पड़ी जिसने मुझे बड़े मजबूत लोहे के सन्दूक में बन्द कर दिया। उसी बक्स में मेरे ऐसे पाँच सौ कैदी और बन्द थे। इस जेलखाने से हम लोग केवल दो बार सबेरे और साँझ निकाले जाते थे और बाद गिने जाने के फिर बन्द कर दिये जाते थे। हम लोग आपस में अपना-अपना वृत्तान्त कह सुन किसी तरह समय बिताते थे। तीन वर्ष-पर्यन्त हम लोग यह मुसीबत झेल उपरान्त एक दिन बे-वख्त हम लोगो ने अपने जेलखाने का ताला खुलने का आहट पाया। थोड़ा खटपट होने के उपरान्त तीन या चार बार बड़े जोर का शब्द हुआ जिससे हम लोग बहुत घबड़ा गये और ऊँचे स्वर से ईश्वर की आराधना करने लगे—"हे स्वामी ! हमारी रक्षा करो"

हमारी इस बिनती और आर्तनाद पर सर्वान्तिर्यामी ने कृपा की और उस ऐरनचेस्ट के खुलने पर एक महाशय नई रोशनी वाले नजर पडे यह हम लोगो की ओर देख मुसकिराये और कहा—आज हमारे पिता का जिन्होने तुमलोगो को इतना सताया देहान्त हो गया आज से आप लोगो को भी रिहाई हुई। यह सुनते ही मैं खिलखिला उठी और उन्हे धन्यवाद दिया। और मेरे सब साथियो की क्या दशा हुई यह तो मुझे मालूम नही पर मैं तुरन्त ही एक शराबखाने की सर करने को उन्ही महाशय के बैरा के साथ गई, शराब वाले ने मुझे एक तरकारी बेचने वाले को दिया; उसने एक कसाई को दिया; कसाई ने एक रङ्गरेज़ को; रङ्गरेज ने मुझे अपने स्त्री को सौपा; जिसके यहाँ मेरा एक ही रात में जी घबड़ाया और मेरे बहुत गिड़गिड़ाने पर दूसरे ही दिन गिरजे में मुझे इसने एक पादरी साहब के हवाले किया। यह तो आप खूब जानते होंगे कि मै बड़ी घुमन्ती होती हूँ और

आगे सुनिये। कभी तो मैं मिठाई, कभी खिलौने, कभी क्रुस्टमस कार्ड, कभी स्टिक, कभी गोल्डेन लीफ, और न जाने क्या-क्या मैं लाया करती थी। कई बार मैं लोगों के साथ थियेटर व सरकस देखने गई पर भीतर ले जाना न पसन्द कर गेट ही पर टिकट वाले के सुपुर्द मुझे उन्होंने कर दिया। जिसने दो या तीन मिनट तो रक्खा फिर उसने मुझे किराये के बदले एक Landou वाले को दिया। इस बादशाह की जेब में जाना मैंने स्वीकार न किया और फिसल कर नीचे गिर पड़ी। पर कहावत है :—

'जाको प्रभु दारुण दुख देहीं। मति तांकी पहिले हरलेहीं' ॥

मैंने तो जान बचाई पर इस भागाभूगी में मेरे ऊपर एक गाड़ी का पहिया फिर गया और मैं बिलकुल दबकर पिचन्नी हो गई परंतु कोई भारी घाव शरीर में न होने से जखम सब सूख गये और तीसरे दिन मेरे ऊपर एक सेलर की निगाह पड़ी उसकी जहाज उसी दिन हिन्दुस्तान को आने वाली थी बस फिर क्या उसके साथ मै पिनाफोर नाम जहाज पर वहाँ से रवाना हुई और धीरे-धीरे जहाज के सभी आदमियों से मेरी मुलाकात हुई और बम्बई के बन्दरगाह में जहाज के लगते ही मैं वहाँ से निकल भागी और एक मारवाड़ी महाजन के यहाँ पहुँच पन्द्रह रुपया कुछ आने की बिकी। अब मेरी उमर दो सौ वर्ष के ऊपर हो गई थी बहुत जीर्ण होने के कारण इत्तिफाक से टकसाल पहुँची और वह तन त्याग दूसरा पुनर्जन्म पाया। अब मेरे एक ओर महाराणी विक्टोरिया और दूसरी ओर (इतना कह अपनी पीठ दिखलाया) ये सब रहने लगे। हाँ, इतना कहना मै भूल गई कि French Revolution के समय मैं फ्रांस और Peninsular war के समय मैं स्पेन और यूरोप के सब हिस्सों में घूम चुकी हूँ।

हिंदुस्तान में जन्म लिये मुझे ६७ वर्ष हुये इसका कोई हिस्सा नहीं बच रहा जहाँ मैं नहीं गई। इतना कहते उसे न जाने क्या याद आया कि बड़े जोर से हँसी और हँसते-हँसते लोट गई। मैंने उसे सावधान कर फिर खड़ी किया जब होश में आई तो मैंने फिर पूँछा कि तू क्यों इतना हँसी? तब वह बोली मुझे एक वेश्या के घर जाना पड़ा था उसके यहाँ अच्छे लोगों की जो दशा होती है वह मुझे याद पड़ी इस लिये मुझे हँसी आई। यह घर वह पुण्य भूमि है जहाँ प्रवेश पाने के लिये लोग चोरी को पुण्य काम समझते है, जुआ को यज्ञ के तुल्य मानते हैं; माता पिता बंधु भाई स्त्री सब को त्याग इस परमेश्वरी का उगाल दान उठाना अहो भाग्य मानते हैं। खूब अच्छी तरह समझे रहिये इनको भी मैंने ही अपने वश में कर रक्खा है जिसपर मैं नहीं कृपा करती वह कितना ही लम्ब शाटपटा वृतः हो यह उसकी ओर कभी आँख उठाके नहीं देखती। डोम भी हो पर मेरा कृपापात्र है तो ये उसकी जूतियाँ तक उठाने में कभी बुरा नहीं समझतीं। पाठक, महाशय मैं तुम्हें सचेत करती हूँ कि तुम कभी इनके भ्रमजाल में न पड़ो नहीं तो ये तुम्हें जहाँ तक निचोड़ते बन पड़ेगा कसर न करेंगी और तब तुम्हें शव तुल्य अस्पृश्य समझ त्याग देंगी। और भी वह कुछ कहा चाहती थी कि अचानक तोप छुटने का शब्द मेरे कान में आया मैं चौंक पड़ा और देखता हूँ तो सुबह हो गया। सामने धरम घडी में छोटी सुई छः पर पहुँची और ६ बजने लगे। नीद की खुमारी में तो था ही चारुदत्त के कथानक के संबंध में शर्विल के कहे हुये श्लोक मुझे याद आयेः—

इह सर्वस्वफलिनः कुलपुत्रमहाद्रुमाः।
निष्फलत्वमलं यान्ति वेश्याविहगभक्षिताः।

एता हसन्ति च रुदन्ति च वित्तहेतोर्विश्वासयन्ति पुरुषं नतु विश्वसन्ति।
तस्मान्नरेण कुलशीलसमन्वितेन वेश्याः श्मशान सुमना इव वर्जनीयाः।

इयं च सुरतज्वाला कामाग्निः प्रणयेन्धनः।
नराणां यत्र हूयन्ते यौवनानि धनानि च।

सितंबर १६००

[२२] वकील

यह जानवर ब्रिटिश राज्य के साथ ही साथ हिन्दुस्तान में आया है। पुराने आर्यों के समय इनका कहीं पता भी नहीं लगता। मुसलमानो की सल्तनत में वकील वही कहलाते थे जो छोटे राजा या रईसों की ओर से किसी चक्रवर्ती बड़े राजा के दरबार में रहा करते थे पर किसी न्यायकर्ता के सामने बादी प्रतिबादी की ओर से अब के समान बादानुवाद से उस वकील को कोई सरोकार न था। वास्तव में अङ्गरेजी शासन ने इस पेशे को बड़ी उन्नति दिया। सच पूछो तो यह एक परम स्वच्छन्द व्यवसाय है और बड़ी बुद्धि का काम है। कोई ऐसा विषय नहीं है जिसको कभी न कभी वकील को अच्छी तरह जान लेना नहीं पड़ता। कभी इसे राजकीय विषयों में घुसना पड़ता है कभी को वाणिज्य और तिजारत को ऐसा जानना पड़ता है जैसा किसी ने जन्म भर वही काम किया हो। कभी ज़िमीदारी का रस बिना अंगुल भर जमीन अपने अधिकार में रखने के भी उसको चखना या अनुभव करना पड़ता है। इस पेशे की आमदनी का कुछ ठिकाना नही है जिसकी दूकान चल गई लक्ष्मी उसके सामने हाथ जोड़े खड़ी रहती है। जिसकी न चली उसको रोज रोज़ा रखना पड़ता है रोज़ी उसको दुर्लभ हो जाती है। जिसका काम चलता है नहीं भी चलता उसका वह हाल रहता है जैसा जुआरी का। दाँव पड़ता गया नया गहनापाती खाना कपड़ा सभी कुछ बढ़िये से बढ़िया तैयार हो गया। न पड़ा तो पेट में चूहे उछला किये किसी को मुँह दिखाने में शरम होती है। बहुतों की समझ है कि इस काम में पुलिस की नाईं झूठ जरूर बोलना

पड़ता है पर यह किसी तरह सच नहीं है। हमने अच्छे-अच्छे तजरिबेकार वकीलों से सुना है कि वकीली की विजय नामवरी और प्रतिष्ठा सत्य ही से होती है। बहुत लोग कहते हैं इस पेशे में मेहनत नहीं करना पड़ता है यह भी मिथ्या है। मन और मस्तिष्क दोनो को बड़ा परिश्रम पड़ता है दूसरे का दुःख अपना समझ उसको दूर करने के लिये भिड़ जाना पड़ता है। मसल है एक गरड़िये के ऊपर भेंड़ चुराने का अभियोग लगाया गया। गड़रिये के वकील साहब ने जज के सामने बहस कर उसे छुटा लिया। गड़रिया और उसका मित्र दोनों घर लौटे आते थे मित्र ने पूछा—भाई, सच बतलाओ तुम ने भेड़ चुराया था या नहीं? उसने कहा, भाई चुराया तो था पर जब से वकील साहब की बात सुना तब से मन में सन्देह है कि हमने सचमुच चुराया था या नही।

वैद्यों ने निश्चय किया है वीर्य के क्षय से भी वाणी का क्षय अधिक निर्बल करता है सो वकालत के पेशे में कितना बकना पड़ता है इसकी कोई हद्द नहीं है तब वकीलों के परिश्रम का क्या कहना? सच तो यों है कि जिन लोगों ने अदालत की सैर की है वे जान सकते है कि वकील कितनी मेहनत करते हैं और कितना मुअक्किल का उपकार अदालत में इनसे होता है। जब दो वकील तीतर-बटेर से लड़ते हैं तब जो सुनने वाले होते हैं वे प्रायः दो तरह के होते हैं या तो बादी से उनका संबंध रहता है या निरे तमाशबीन होते हैं जो केवल दिल-बहलाव और सैर के लिये अदालत गये थे। जो दो फरीक में किसी एक के सम्बन्धी होते हैं वह अपने वकील की तकरीर सुन प्रसन्न हो जाते हैं उसके पत्येक शब्द को वेद वाक्य मानते है और प्रतिबादी के वकील की तकरीर बड़े क्रोध से सुनते हैं यहाँ तक कि बस चलै तो मार बैठैं। जो सैर सपाटे के लिये गये हैं वे

अचंभे में आजाते हैं कि दोनों देखने में प्रतिष्ठित हैं पर सच्चा दो में कौन है। फौज़दारी हो चाहे दीवानी हो अपने मुअक्किल की बात पुष्ट कर देना और सत्य को चमका देना वकील ही का काम है। इङ्गलैंड में एक राजवधू ने राजकुमार पर अभियोग किया राजवधू के वकील ने अपनी वक्तृता में कहा हम लोगों का काम शुद्ध और पवित्र है हमको केवल अपने मुआक्किलों की बात सिद्ध करना है। यद्यपि मैं इस समय इस देश के राज कुमार पर अधिक्षेप कर रहा हूँ इसका मुझे कुछ भी चित्त में संकोच नहीं है जिसका मैं वकील हूँ उसके फ़ाइदे पर मेरी दृष्टि है चाहे देश का देश विरुद्ध हो जाय तो मैं उसे कुछ ख्याल न करूंगा।

सच तो यो है देश के उद्धारक इस समय ये वकील ही देखे जाते हैं। बड़े.बड़े राजकीय विषयों के समझने और उस पर तर्क-वितर्क, ऊहा-पोह करनेवाले यही तो देखे जाते हैं वैसेही इनका स्वच्छन्द व्यवसाय भी है कि औरों के समान ये गवर्नमेंट या कर्मचारियों के बाधित नही हो सकते। धैर्य हिम्मत साहस ये तीन बातें इस पेशे की जान हैं। अच्छा लायक वकील चलता-पुरजा वही होगा जिसमें ये तीनों बातें होंगी। गवर्नमेंट कानून हिन्दी की चिन्दी निकालते हुये मुल्क की तरक्की में मानों जहरसा घोल रही है उसका 'ऐंटीडोट' प्रतीकार ये वकील ही हैं। बड़े-बड़े शहरों की शोभा हैं जो चलते बनै तो औवल दरजे की प्रतिष्ठा का द्वार है। पर सोच होता है जब खयाल करो कि बन्दर के हाथ में मणि के समान कितने इस पेशे को ऐसा बिगाड़ रहे हैं कि वकील झूठ को सच सच को झूठ कर देने के लिये बदनाम हो रहे हैं सो न किया जाय तो वकालत आदमी को अपनी इज्जत बनाने के लिये बड़ा उमदा ज़रिया है। वह जमाना गया जब वकीलों की तवायफ़ के साथ तुलना दी जाती

थी। अब इस समय सभ्य सुशिक्षित जिन्होंने अङ्गरेज़ी की उमदा तालीम पाई है उनको अपने उत्तम गुण शैलील्य, सौजन्य, सच्चाई, ईमानदारी के प्रगट करने को यह काम एकमात्र सहारा है और अङ्गरेज़ी राज्य में बड़ी उत्तम जीबिका है चलते बन पड़ै तो। इत्यादि।

जुलाई, १८९८

(२३) अकिल अजीरन रोग

इस अकिल अजीरन रोग ने किसी को नहीं छोड़ा तमाम तिब्ब और वैद्यक छान डाला इसका इलाज कहीं न पाया। कोई कितना ही विशाल-बुद्धि हो एक न एक अकिल अजीरन का पुछल्ला पीछे लगाही रहता है। सब के पहले हम अपने ही को जाँचते हैं। मन में तय किये बैठ है कि हम अगाध बुद्धि के महा महासागर हैं, सच्चरित्र की ऐसी कसौटी तो कही ढूँढ़ने से भी मिलना कठिन है, इसलिये सर्बजन हितैषी होने की अगाढ़ इच्छा ने जो जोर किया तो अकिल का अजीरन हो गया और यह बेहूदापन गाँठ वाँध लिया कि एडिटर बन पर उपदेश कुशल बनें। अपने हिन्दुस्तानी भाइयो का सब भद्दापन दूर कर इन्हें कुन्दन-सा निखालिस और चमकीला कर दें।'

'प्राशुलभ्ये फले मोहादुद्वाहुरिव वामनः'

चढ़ाव-उतार के साथ ऊँचा-नीचा समझाते उमरकी उमर खे डाला पर कुछ असर न हुआ किसी एक बात में भी इन्हें सुधार करते न पाया। स्वराज की उत्कट बाछा अलबत्ता जोर पकड़ती जाती है। कभी एक बार भी मन मे नही धँसता कि हमारी इस सामाजिक गिरी दशा में स्वराज की बासना कितनी हास्यास्पद है। विद्या और बुद्धि वैभव में वाचस्पति के भी बाबा हमारे युवक जो निस्सन्देह देश की भावी भलाई के अङ्कुर हैं, जिनका नया जोश नई तालीम, नई रोशनी, नई उमंग सब मिल एक ऐसा नये तरह का आकि़ल अजीरन उनमें पैदा कर दिया जिससे पुराने ख्याल वालों की मन्ध भी उन्हें नहीं सोहाती। इन पुरानों को चाहता था

कि वे दरीना बुजुर्ग और बहुदर्शी थे इन नयों की कदर करते सो उनके बजबजाते हुए सड़े दिमाग में जिसकी याद करते उकलाई आती है इन नयों की नई रोशनी घसती ही नहीं तब क्यों कर उनका अन्धकार दूर हो। जन्म-जन्म का कोढ साफ होते-होते होगा आज ही सब कैसे हट जाय। इन नये और पुरानों की अकिल अजीरन ने हमारी हिन्दू समाज को डांवांडोल में छोड़ नौका समान मझधार में डुबो रही है।

"हरहटों की लड़ाई में कपिला का विनाश"

हमारी वर्तमान गवर्नमेंट अपने को इनसाफ पसन्द न्यायशील और उदार प्रसिद्ध किये है पर अकिल अजीरन का पुछल्ला ऐसा उसके साथ लगा है कि जिससे उसके कर्मचारी गण यह कभी सोचते ही नहीं कि स्वजाति पक्षपात के मुकाबिले न्याय और उदार भाव उनके कामों से सिद्ध होता है? वरन सदा इसी कोशिश में लगे रहते है कि हिन्दुस्तानी उभड़ने न पावें। सरकार के राजकीय प्रबन्ध और मुल्की इंतिजाम सब सराहने योग्य हैं। हर एक महकमोंके अकिल का अजीरन जुटते-जुटते पुलिस सिस्टेम बन गया जिससे सरकार के न्याय में बट्टा लगने के अलावा अङ्गरेजो राज अत्याचार और बिद्दत करने में नवाबी का भी कान काटे हुए है। बेद के समय के हमारे पुराने आर्य ऋषि बडे बुद्धिमान् तपस्वी पवित्र चरित्र और सकल विद्या पारंगत थे पर अकिल अजीरन ने उन्हें भी न छोड़ा। अपने संतान ब्राह्मणों को दक्षिणा लेने का पूर्ण अधिकार दे गये और लिख गये कि :—

"अविद्यो वा सविद्यो वा ब्राह्मणो मामकी तनू"

भगवान् कहते हैं—"ब्राह्मण जिवा-पढा हो चाहे अपढ़ हो हमारी देह है" "अग्नि में होम करने से हम इतना संतुष्ट नहीं होते जैसे ब्राह्मणों के भोजन और दक्षिणा देने से। यह न सोचा पीछे

यह दक्षिणा उनके लिये जहर हो जायगी । दक्षिणा के सहारे ये पढ़ना-लिखना सब छोड़ बैठेंगे और नितांत बेकदर हो—

"पीर बबर्ची भिश्ती खर"

बन बैठेंगे । दक्षिणा की आशा से सबों के सामने हाथ पसारना कैसा घिनोना काम है पर हमारे ब्राह्मण भाई इसे बड़ा प्रतिष्ठित समझ रहे है । अच्छा किसी ने कहा है :—

"नित्यं प्रसारितकरः करोति सूर्योपिसन्तापम्"
"नित्य प्रसारितकरो दक्षिणाशाप्रसादकः"
"न केवलमनेनैव दिवसोपि तनूकृतः ।"

कर के माने किरन और हाथ के भी हैं । सूर्य ऐसे तेजस्वी भी नित्य "कर" किरन दूसरे पक्ष में हाथ पसारे रहते हैं तो वह भी सताप देते है । हमने अनुभव पूर्वक इसे देख लिया है कि जब तक कर के नीचे कर रखने की आदत ब्राह्मणों की दूर न होगी और सदा बेहने-घुने का इन्हें मिलता जायगा तब तक ये कभी न चेतेंगे । जिस दिन निद्रा विसर्जन कर परशुराम के सामने ये चेत उठेंगे उसी दिन देश का दुख दरिद्र दूर हट स्वराज सहज में मिल जायगा । कोई अवतारिक पुरुष पैदा हो कि दक्षिणा माँगना इनका छुटा दे तो बड़ा उपकार हो ।

कहाँ तक कहें इस अकिल अजीरन ने ईश्वर तक को नहीं छोड़ा । सृष्टि रचना करते समय उसकी कारीगरी में जो कुछ भद्दापन आता गया वह सब कूड़े के समान इकट्ठा होता गया और कूड़ो का ढेर का ढेर Embodied मुजस्सिम आकृतिमान् हो इल्लटरेट सेठ के आकार में परिणत हो गया । दूसरे यह कि अकिल का अजीरिन नही तो इसे कौन शऊरदारी कहैगा कि उड़ीसा में तो इतना पानी बरसै कि देश का देश बह जाय देश के और हिस्सों में कहीं कसम खाने को भी श्रावण के उपरान्त

बूंद धरती पर न आवे। सबेरे ही से बारहों सूर्य इकट्ठे हो जो आँख फाड़ एक टक चितौने लगे तो दो महीने तक पलक न भाँजा खेती सब एक दम ठाँव ही पटपटाय रह गई। पशु सब तृण के अभाव से संयमिनी पुरी के पाहुने होने लगे। गल्ले के रोजगारियों की बन पड़ी रेलोब्रादर्स के ढो ले जाने से जो बच गया उसे मोतियों के भाव बेचते हुए रुपये से अपना घर भर लिया। मारे खुशी के पेट उनका नगाड़ा-सा फूल उटा।

"क्वचित् दोषो गुणायते"

दैव का यह अकिल अजीरन उनके लिए पारस हो गया।

"किसी को बैंगन बावले बिसो को बैंगन पथ्य"

वाली कहावत ठीक उतरी। अन्त को यही कहने का मन होता है कि सब रोगों में अकिल अजीरन लाइलाज मर्ज है और कोई नहीं बचा जो ईश्वर की विचित्र रचना में इस बीमारी में मुबतिला न हो।

मार्च १९०९

[२४] इङ्गलिश पढ़ै सो बाबू होय । जाति पाँत पूछै नहि कोय ।।

देश में अङ्गरेजी शिक्षा और अङ्गरेजी सभ्यता के साथ ही साथ बाबू शब्द का भी प्रादुर्भाव होने लगा और अब तो यहाँ लौ राइज हो गया है कि हिन्दू मात्र बिना किसी निर्ख के चाहे जो हों बाबू कहे जाते है। हमारा पुराना लाला शब्द जो सर्व साधारण में केवल खत्री वैश्य और कायस्थ के लिये इस्तेमाल में आता था सरकारी अमलों में सिर्फ कायस्थों ही के लिये राइज है सो अब बाबू शब्द वृहद् ब्रह्माण्डवत् व्यापक हो लाला को तो अन्तर्गभित कर ही लिया लम्बी उछाल मार बहुत आगे जा कूदा। अङ्गरेजी चार अक्षर जरूर पेट में पड़ गई हो चाहे जो हों बाबू हैं।

सब धान बारह पसेरी

धोबी कहाँर से लै ब्राह्मणों में षट्कुल और चितपावन तक सब इस बाबू के बड़े भारी लम्बे दायरे के अन्तर्गत है।

यह बाबू उपाधिधारियों के नाम की टिप्पणी हुई, अब बाबुओं के काम का विवरण करते हैं। इंजिन ड्राइवरों की तरह मुख्य काम बाबू का कुइल ड्राइवरी का है जिसका दूसरा नाम बाबूगीरी भी है। बाबू के साथ साहब लग जाने से मानों गोट सी लग गई कोई झगड़ा ही न रहा। किसी दत्फर के हेडक्लर्क या किसी दूसरे महकमे के बड़े से बड़े बाबू; कारगुजारों में अव्वल सब के सिरताज समझे जाते हैं। अकेले बाबू शब्द से अलबत्ता बड़े से बड़े वकील से दस रुपये महीने का मुहर्रिर

तक सब बाबू हैं पर अङ्गरेज़ी तालीम का उनके साथ भी नित्य सम्बन्ध है। बाबू कहलाने वाला अङ्गरेज़ी जरूर पढ़ा हो। अह्ल यूरोपवालों के बीच बाबू एक हिकारत की लब्ज समझी गई है जैसे बाबू लाइक इङ्गलिश कैसी ही शुस्ता अङ्गरेज़ी चुस्त इबारत में लिखी हो पर यह मालूम हो जाय कि किसी हिन्दुस्तानी का यह लेख है तो हमारे साहबान अह्ल विलाइत पायोनियर ऐसे उसे बाबू लाइक इङ्गलिश कहा करते हैं। बाबू शुद्ध हिन्दुस्तानी हैं हमारे अङ्गरेज़ महाशय ज़रा ज़बान को टेढ़ी कर जब इसे बोलते हैं तब यह टकसाली अङ्गरेज़ी ही बाबू का ब्याबू बन जाता है और एक न अन्त में और जोड़ देने से यह 'व्यबून' बन्दर या बनमानुष बन जाता है।

हमारे पुराने वैयाकरणी और अलङ्कारिकों ने अभिधा लक्षणा व्यञ्जना शब्द की ३ शक्ति माना है। ब्याबू शब्द में न के जुड़ जाने से एक शक्ति और नई पैदा हो जाती है जो इनसान को आदमी से बन्दर बना देती है। बाबू में आन लगा दो बबुआन छोटे मोटे राजा का बोधक होता है। खाली आ रक्खो बबुआ दूधमुहे बालक का बोध करावेगा। पर अमूमन तो बाबू वेही हैं जो अपने 'सुपीरि-अर' हाकिम वाला की घुड़की झिड़की सहने में प्रवीण हों; गुलामी में रहते रहते शट्ठे पड़ गये हों दस रूपए की भी नौकरी मिल गई मानो शाही तख्त मिला जन्म सफल हो गया किस्मतवरों में सब के अगुआ हो गये। अरज़ी हाथ में लिये बंगले बंगले बरसों तक घूमते घूमते तलुवे की खाल घिस गई, उम्मैदवारों में नाम दर्ज कराय ताकते ताकते आंखें भैं गई नौकरी न मिली, सो नौकरी शिफारिस महामंत्र के अनुष्ठान से तुर्त फुर्त दस्तयाब हो गई तो अब किस्मतवरी और कैसी होनी चाहिए। इत्यादि, बाबू के काम के बिबरण ये चाहे पेज का पेज रंगते चले जाइये रामर-

रसरा न चुकें । खुलासा सबका यही है कि बाबूगिरी के लिये लायक से लायक वही है जिसकी तबियत में जोश ने जगह न किया हो और दास्य कर्म में अतिकुशल हो।

अगस्त १८६६

(२५) नहीं

यह भी क्या ही बिचित्र दो अक्षर का शब्द है जिसे कोई कभी नहीं पसंद करता। बहुतेरों का तो यह खयाल है कि संसार रूपी पुस्तक से ये दो हर्फ़ छील दिये जाते तो अच्छा होता। जो कोई किसी से कुछ कहता है, पूँछता है, माँगता है तो उसके मन में यह शका काँटा सी चुभती रहती है कि उत्तर में उसे ये दो हर्फ कहीं न मिल जाय। इतिहास और पुराणो में देवताओं का एवमस्तु सुना जाता है और उस एवमस्तु से जो-जो अद्भुत बातें देखने में आई हैं वह भी किसी से छिपी नहीं हैं। वरप्रदान रूप एवमस्तु से संसार में जो-जो सुख लोगों को मिले हैं वह भी सब लोग जानते हैं। पर नहीं इन दो अक्षरों से भी किसी को कुछ सुख मिला है कभी सुनने में नहीं आया। गौरांगों में विवाह की जड़ इन्ही दो अक्षरों का उलटा है अर्थात् पुरुष स्त्री से "ईश्वरीय भवन" गिरजा घर में पूंछता है तू मुझको अपना पति होना स्वीकार करेगी ? उन दोनों का जन्म-पर्यन्त एक मन दो तन होने का और आजन्म साथ रहने का दारमदार इन्हीं दो अक्षरों का उलटा उत्तर अर्थात् हाँ है। कहीं ये दो अक्षर उस समय स्त्री के श्रीमुख से निकल जाँय तो जिनमें यह व्यौहार प्रचलित है उनके स्त्री और पुरुष का नाता ही न पैदा हो सृष्टि की रचना ही रुक जाय। डूब कर देखिये तो संसार में इस नहीं की नहीं होना ही भलाई है।

किम्वदन्ती है कि एक धर्मिष्ठ न्यायपरायण राजा भेष बदल एक रात को नगर देखने निकला। घूमते-घूमते एक पेड़ के नीचे दबके खड़े हुये उसे चार आदमी मिले, राजा को देख वे चारों

भयभीत हो बोले अरे तू कौन है ? राजा ने जवाब दिया जो तुम हो सो हम हैं। राजा का ध्यान उस समय ज्ञानकाण्ड के मार्ग में था जिसका तात्पर्य यह हुआ कि मनुष्य मात्र सब एक हैं। पर वे चारो जो वास्तव में चोर थे राजा के कहने को अपने मतलब में झुका लाये और बोले आज भादों की १४ है नन्हीं-नन्हीं झीसियाँ पड़ रही है शीतल मन्द समीरण बह रहा है चलो किसी बड़े घर को मूसैं। एक ने कहा चलो आज इस नगर के राजा के यहाँ सेंध दे। रनवास मे जड़ाऊ सोने चाँदी के भूषण बसन बहुत हाथ लगेगे। एक ही बार की चोरी में अमीर बन बैठेंगे। राजा ने कहा—अच्छा, हम भी साथ चलेंगे पर बतलाओ आप लोगों में क्या-क्या गुण है। एक ने कहा हमे रुत ज्ञान है अर्थात् हम चरिन्द-परिन्द सबों की बोली पहचान सकते हैं कि वे क्या कह रहे है। दूसरे ने कहा हमें ऐसी स्मरण शक्ति है कि जिसे एक बार देख लेते है उसे फिर कभी नही भूलते। तीसरे ने कहा हम गड़ा धन बतला सकते हैं। चौथे ने कहा जहाँ कहीं धन हो हम निकाल देगे। उपरान्त चारों ने राजा से पूछा तुम्हारे मे क्या गुण है ? राजा घबड़ा गया और बोला मेरा नही सङ्कटमोचन है आदमी को फ़ाँसी होती हो हम नहीं कहैं वह फ़ाँसी से छुट जाय। पाठक ! याद रहे ऐसी "नही" संसार में अत्यन्त बिरली है। अस्तु, चारों चोरो ने पाँचवें राजा समेत राजमन्दिर के ओर जाय रनवास मे सेंध दिया। राजा ने उन चारों से कहा इस अपरचित घर मे मैं भटकता फिरूँगा इसलिये मैं सेंध के बाहर रहूँगा तुम लोग जो भीतर से लाय मुझे दोगे उसे मै इकट्ठा करता जाऊँगा। जिस समय वे पाँचों राजमन्दिर की ओर जाय रहे थे कुत्ता भूकने लगा। उन चारों में से तीनों ने उस रुतज्ञानी से पूछ कुत्ता क्या कह रहा है। रुतज्ञानी ने उत्तर दिया कुत्ता यह पुकार रहा है ये पाँचों चोर नहीं हैं किन्तु एक

उनमें से इसी शहर का राजा है। इस पर सब लोग हँस पड़े कि कुत्ता बावला है चलो चलें अपना काम करें। राजमन्दिर में पाँचों जब गये तो वहाँ सब लोग सो रहे थे। वह मनुष्य जो जान लेता था कि धन कहाँ है बताने लगा और लोग ढो-ढो कर राजा के पास लाय रखने लगे। इसी अवसर में राजा ने कोतवाल को खबर दी कोतवाल ने आय उन सबों को पकड़ लिया चोरों को अचरज भया कि वह पाँचवाँ कहाँ गया फिर समझा दौड़ आते देख भाग गया होगा। दूसरे दिन कचहरी में चारों लाये गये। प्राड्विवाक अर्थात् जज ने हुक्म दिया चारों का सिर काट लिया जाय! चारों राजा को ओर देख विस्मित हो गये। जिसे स्मरण शक्ति थी वह राजा को सिंहासन पर बैठा देख बोला यह जो सिंहासन पर बैठा है उसे हम ने कहीं देखा है। रुतज्ञान वाले ने भी कहा ठीक है कुत्ते ने भी ऐसा कहा था। जब गारद के सिपाही उन्हें बध्य स्थान में ले चले तो उन सबों ने कहा हम लोगों ने अपना-अपना गुण प्रगट कर दिखाया आप अपने सङ्कट मोचने वाले गुण 'नहीं' को कब प्रगट कर दिखावेंगे। यह सुन कोतवाल राजा की ओर अचरज में आय देखने लगा। राजा ने कहा 'नही' साराश यह कि अन्त में सब छूट गये। पाठक! इस विरली 'नही' का दृष्टान्त हमने आपसे कह सुनाया।

विचार कर देखिये तो संसार में एकही 'नही' ऐसी है जो बड़ी मीठी और प्यारी है जिसे आदमी यावज्जीव नही भूलता अर्थात् नवोढ़ा के प्रथम समागम मे जहाँ 'हाँ' किसी को कम भावती है।

असम्मुखालोकनमाभिमुख्यं निषेध एवानुमतिप्रकारः।
प्रत्युत्तरं मुद्रणमेव वाचो नवाङ्गनानां नव एव पन्थाः॥

जुलाई १८६८

[२६] बिना भाव

भोगबिलास धन सम्पत्ति अनेक प्रकार का वैभव आराम आसाइश इत्यादि सब सुख एक ओर। गरीबी अकिञ्चनता अन्न-वस्त्र का कष्ट सहनपूर्वक दुःख जीवन दूसरी ओर। ये दोनों वास्तव में कुछ नही है बरन इसी बिना भाव के सकोच और बिकाश हैं। इसे विकाश हम इसलिये कहते हैं कि सन्तोष को मन मे बिना जगह दिये यह बिना भाव किस ओर छोर तक बढ़ता रहेगा कि जिसकी सीमा नहीं है उसके सिमटने के लिये इस अखण्डब्रह्माण्ड का एकाधिपत्य भी पर्याप्त नही है। अब संकोच इसे इसलिये कहते हैं कि सन्तोष जहाँ मन में आया कि इसकी जितनी खाहिशें और हिर्सहवस सब कछुये के पॉव के माफिक सिमिट जाती हैं इस समय की मन की दशा को चाहे शान्ति कहो, चाहे उदासी कहो, चाहे दैन्य कहो, या घी ढरक जाने पर रूखी दाल को मजादार कहने वालो की ताईद मानो, चाहे इसे मन का समझौता कहो, चाहे शुष्क वेदान्तियो का सन्तोष मानो।

एक हिन्दुस्तान ही ऐसा अभागा देश है जहाँ बिना भाव के संकोच ने इस कदर पंजा फैला रक्खा है कि उत्साह उमङ्ग जोश सब एक साथ बिदा हो गये। तरक्की और आगे बढना सपने के से खयाल हो गये जहर के समान रग-रग में यह ऐसा व्याप्त हो रहा है कि लोगो की तबियत मे उभाड़ होता ही नही। चौबीस घण्टे में एक बार भी रूखा-सूखा अन्न आधे पेट भी मिल जाय और चिथरा गुदड़ा भी तन ढाँपने को मिलता रहे तो उतने ही से सन्तोष करलें। वही दुनिया के और और मुल्क हैं जहाँ

सभ्यता और तरक्की इस अन्तिम सीमा तक पहुँच चुकी है फिर भी बिना भाव का बिकाश बढ़ता ही जाता है।

एक समय वह था कि मखमली बिछौना भी देह में चुभता था आबरवाँ तनज़ेब मलमल गड़ता था और बड़ा बोझा मालूम होता था। तकल्लुफ़ का षट्रस भोजन किसी एक मसाले के ज़रा से घटबढ़ में फीका और बदज़ाइका मालूम होता था। बदक़िस्मती से ऐसा एक ज़माना आ गया कि टाट बिछौना और कमली ओढना कंकड़ो पर बिछा के सोते हैं तो वह घर्राटे की नींद आती है कि जिसके लिये साटन और मखमल से मढी कोच पर सोने वाले तरसते हैं। सच है 'निद्रातुराणां न च भूमिशय्या' कमली का ओढ़ना तनज़ेब और मशरूम को मात करता है जहाँ षट्रस भोजन में ज़ाइका नहीं मिलता था वहाँ अब सूखे चने और ज्वार की रोटी खाली नोन के साथ अमृत मालूम होती है।

'क्षुत्स्वादुता जनयति'

पहले तोले भर बालाई में अजीरन हो जाता था अब पत्थर के टुकड़े भी खालें तो पच जाँय 'गत सुखी ससार' इस कहावत की सचाई ऐसे ही ऐसे मौकों पर प्रत्यक्ष होती है। सुकुमारी सीता जिनके कोमल चरणों की महाउर का रङ्ग भी बोझ था राजकुमार राम लक्ष्मण जिनको दूध के फेनसी कोमल शय्या पर नीद नहीं आती हाय ! नंगे पाँव दण्डक बन की कटैली पथरीली पृथ्वी पर घूमते हुये क्योंकर चौदह वर्ष पार करैंगे महाराज दशरथ ने इसी शोक में तन त्याग दिया। किन्तु, इसी गत सुखी ससार वाली कहावत के अनुसार हमारा यह बिना भाव धीरधुरन्धर श्री रामचन्द्र के मन पर ऐसी प्रभुता जमाया कि बनवास के चौदह वर्ष भी वैसा ही कटे जैसा राजभवन में कटते। ऐसा ही नल दमयन्ती द्रौपदी और पाण्डवों की विपत् का समय सुमिर रोंघटे खड़े होते हैं किन्तु यही बिना भाव उन उन धीरधुरीण महा पुरुषों के लिये

भी विपत्ति के समय का सहारा हुआ। किम्बहुना, सूक्ष्मदृष्टि से देखिये तो बिना भाव का संकोच यहाँ तक पाया जायगा कि आदमी आध सेर तीन पाव रूखा-सूखा अन्न कन्दमूल फल या इस प्रकार के दूसरे पदार्थ खाय और स्वच्छ निर्मल जल पान कर पूर्ण आयुष्य जी सकता है। राबिनसन क्रूसो का किस्सा हमारे इस लेख का उपयुक्त उदाहरण है।

फरवरी १८६३

(२७) कतिकी का नहान

कतिकी पूनो पास आ रही है--दूसरे ही दिन होने वाली है। रेल से चार स्टेशन जिसका किराया दस आना आते जाते सवा रुपया है उससे एक स्टेशन इधर ही तक का किराया केवल नव आना है आने जाने के पूरे किराये में दो आने की किफाइत है। पाँच पाँच सात सात के कई झुंड औरत और मर्द के देखे गये जो करीब बीस मिनिट तक बराबर झगड़ते रहे और आपस के "डिबेट" मशविरे में ऐसे मशगूल थे कि पार्लियामेंट के मेंबरों को भी अपने मुकाबिले हेच कर रहे थे। "भाई हमें तो ये दो आने अधिक देते बहुत गढ़ाते हैं दो आने हमारे घर भर का एक दिन का भोजन है। क्या करैं हमें अब गंगा में कतिकी का नहान कल नहीं मिल सकता है। इससे लाचार लोटा थाली गिरो रख रेल का किराया रुपया अठारह आने किसी तरह लाये हैं नहीं तो हम सब लोग पैदल पहुँच जाते। पहले से कुछ इरादा न था कि कतिकी नहाने जाँयगे। कतवारू को जाते देख हमारे घर के लोगों को भी नहाने का हौसिला हो आया"। दूसरा बोला--"यही तो बात है खटला साथ रहने से तो लाचार हो जाना पड़ा अकेले होते तो क्या बात रही किड़िक जाते। हमारे लिये तो इतनी दूर आधे दिन का रास्ता है।" तीसरा जो सुफेद-पोश था जिसकी बोलचाल ले मालूम होता था कि यह सौ पचास रुपये की मातबरी रखता हैं बोला--अजी दो आने की क्या हकीकत है जो देर से इसके पीछे सिर मार रहे हो एक आना कम देने मे दो ढाई कोस पैदल चलना पड़ेगा भाई हम तो दस ही आने का टिकट लेंगे। एक दूसरे जो लाठी में पनही टाँगे लाठी

कंधे पर धरे थे बोले--हम भी तुम्हारें से भागवान् होते तो क्या मुज़ायका था दो आने क्या दो रुपये कुछ न थे। बाहरी लोगों की स्थूल दृष्टि मे यही ख्याल जमैगा कि एक साधारण से पर्व में जगह-जगह लाख-लाख पचास हजार आदमियो की भीड़ जुड़ जाती है तो मुल्क बड़ी खुश-खुर्रम हालत में है जहाँ इतने बेफिकिरे पड़े है जिनको रोज सैर-सपाटा की सूझती है। किन्तु इनका भीतरी हाल सोच जी भर आता है। वास्तव मे जो वे अच्छी तरह खाने-पीने से दुरुस्त रहते तो रेल के किराये में दो आने की कमी के लिये इतना न झगड़ते। फाके करेगे पर पर्ब मे गंगा-स्नान को अवश्य ही जाँयगे।

हमारे नव शिक्षित समझते हैं देश तरक्की कर रहा है इसी धुन में हम लोगो को इस गिरी दशा से उठाने को कांग्रेस, कानफेरेस आदि न जाने कौन-कौन उपाय वे सोचते हैं किन्तु ये सब उपाय हमको ऊपर को उठाने को निरा खयाली पुलाव है। कितनो का मत है कि इज्युकेशन तालीम का सर्व साधारण में प्रचार पाना देश को ऊपर उठा देगा। हमारी समझ से इस पचास साठ वर्ष मे जो विद्या का प्रचार अब तक हुआ है वह रुपये मे एक पाई भी नही है। बङ्गाल और मदरास जहाँ बहुत पहले से अङ्गरेजी फैली और अङ्गरेजी भाषा वहाँ की मातृभाषा की जगह होती जाती है। वहाँ अभी सैकड़े मे सात या आठ आदमी आबादी के हिसाब से पढ़े लिखे पाये जाते है तो हिन्दुस्तान के इस प्रान्त का क्या कहना जो हमेशा हर एक बाटो में औरों के पीछे रहने का आदी हो रहा है आगे बढ़के हाथ मारना जिसे आता ही नही न आगे बढ जाने की हिम्मत इसे है। तालीम अभी मदरास, कलकत्ता, बंबई, इलाहाबाद, लाहौर लखनऊ, ऐसे दो चार बड़े-बड़े शहरों में कुछ फैली है सो इतनी नहीं कि समाज में उसका कुछ असर हुआ हो। हमारी भ्रष्ट

ग्रौर पतित समाज में पढ़े-लिखे ग्रभी केवल दाल में नमक हैं। जिन्हें तालीम हुई है उनकी ग्रॉख खुली तो ग्रब हक्का-बक्का हो गये हैं उन्हें कुछ समझ ही नही पड़ता कि हम कैसे रहें, कैसे चलैं, तालीम पाये हुए ग्रपने इस नये जीवन को कैसे संसार में लै चलै। कितनो को यह तालीम बन्दर के हाथ मे मणि के समान हो गई है। उनके बर्ताव से यही साबित होता है कि तालीम बुरी चीज है। तो जो कुछ ग्रब तक हुग्रा वह सब बाहरी बाहर समाज की ग्राभ्यन्तरिक दशा ज्यो की त्यो वैसी ही बनी है। दिहात ग्रौर ग्राम मे तो कही उसकी छीट तक नही गई जिनका नमूना हमारे इस कतिकी पूनो नहाने वालो के दास्तान से ज़ाहिर है।

इस बात पर भी हमारी दृष्टि गई कि उन नहाने वालो के गरोह मे जो स्त्रियाँ थीं वे गाजर मूली की तरह मर्दो के साथ घसिटती चली जा रही थी। उस देश की भलाई की कब कुछ ग्राशा की जा सकती है जहाँ की स्त्रियाँ ऐसी बेकदर हीन दशा से रक्खी जाती है। ये भी उन्ही बिलाइत की नाजुक-रोशन-जमीर परिष्कृत मस्तिष्क वाली, लेडियों की बहने है जिन लेडियों की सुशिक्षित जाति ग्रौर सुसभ्य देशो में धूम है। यदि इनकी हीन दशा से इनको निकाल मनुष्य की कोटि में ये रक्खी जॉय तो जैसा हम पहले लिख चुके है कि क्या एनीबिसेंट ग्रौर जार्ज इलीयट सी कितनी इनमें न निकले। पर यहाँ तो ये गाजर मूली की सी बेकदर है ग्रौर हमारे समान इनको वही सब बात दी गई है इसका खयाल कभी किसी को होता ही नही तो क्या किया जाय। सतीत्व ग्रौर सच्चरित में ग्रवश्य बिलाइत की परिष्कृत मस्तिष्क वाली लेडियों को कहो लात मारें पर बुद्धि वैभव में यहाँ लौ कम है कि उनके हर एक काम खयाल ग्रौर रुचि में गँवारपन बरस रहा है। ग्रस्तु, स्त्रियों को कौन झीखै

जब पुरुषों का यह हाल है कि वे अपनी वही पुरानी लीक पीटते चले जा रहे हैं ज़माने में क्या क्या हेर फेर हुए इसका खयाल कभी उनको ख्वाब में भी नहीं होता। अफसोस हमारे तालीमयाफ़्ता भी उलटा ही सोचते और चलते हैं। एक तो हमारे यों ही दुर्दिन हैं दूसरे हमारे साथ सहानुभूति दरसाने वालों के (Views) खयाल भी कुछ उलटे ही हैं। जो दुरुस्ती के सामान तक हमें ले जाया चाहते हैं। हमारी इस समय वह दशा है कि दवाखाने को रोगी के पास जाना चाहिये न कि रोगी चलकर दवाखाने के पास खुद आवे। हज़ार कोई कितना ही यत्न करैं हम उस प्रकार के रोगी नही हैं कि आप से चलकर दवाखाने के पास जाँय।

नवम्बर १८६७

(२८) एक इङ्गलिसाइज़्ड नये मित्र की मुलाकात

हमको यद्यपि अहल बिलाइती साहबों से मिलने और उनके बंगलों पर सलाम के लिये जाने का बहुत कम इत्तफाक हुआ था, न हमको इसमें कुछ सुख मिलता है इसलिए साहब लोगों की यह सेवा टहल हमसे आज तक न बन पड़ी। लक्का कबूतर की भाँति बंगलों के इर्द गिर्द कावा मारने या बेयरा खानसामों से दोस्ती पैदा करने का आनन्द ही हमें कभी न प्राप्त हुआ। पर थोड़े दिन हुए हमारे मित्रों में एक साहब जो हालही में विलाइत से लौट वहाँ से साहब बनकर आये हैं अपने परिश्रम और योग्यता से जल्द ऊँचे पद पर पहुँच शहर के औवल दरजे के रईसों में दाखिल हुए। मित्र जी हमारे जरा तेज तबियत और अङ्गरेजी मिजाज के आदमी हैं इसलिए उन्होने शहर की गंदी बस्ती में रहना नापसंद कर शहर से कोसों दूर गंगा के किनारे एक बंगला किराये पर लिया है।

आपको कदाचित यह न मालूम होगा कि अङ्गरेजी बंगलों के भी जुदे-जुदे नाम होते हैं अगर बड़ी कोठियाँ हुई तो क्यासिल कहलाते हैं जो खपड़ैल के छाये हुए भये तो बंगलों या लाज की पदवी पाते हैं और फूस के छाये निरे झोपडे हुए तो काटेज कहलाते हैं। अस्तु, हमारे मित्र ने जो बंगला किराये पर लिया उसका नाम ग्रीन काटेज अर्थात् सब्ज झोपड़ी है। सब्ज इसका नाम दो कारण से बिदित होता है एक तो यह कि घास-फूस की छाई है पर यह कुछ ठीक नहीं मालूम होता सब्ज उसका नाम इसलिये पड़ा कि यह रहने वालों को सब्ज बाग़ दिखलाती है क्योंकि केराया उसका सोलह रुपया साल है। यहाँ पर यह भी समझे रहिये कि अङ्गरेजी मकानों के केराये साल भर के लिये तय होते हैं। और

यह मकान कितना बड़ा होगा सो झोपड़ी के नाम से ही स्पष्ट है। हमारे मित्र जो हम पर बहुत दया दृष्टि रखते है बड़े सज्जन पुरुष है सच तो यो है कि यद्यपि अङ्गरेज़ी वज़ा की बहुत सी बातें उनमें है पर ईश्बर की कृपा से मिजाज में अङ्गरेज़ी रूखापन अभी तक नही घुसने पाया आगे की भगवान जाने क्या हो। खैर, एक दिन उन्होने हमारी जियाफ़त की बड़े चाव से हमें बुला भेजा उनका एक पत्र हमारे पास आया मजमून जिसका यह था—आज साँझ को आप हमारे ही यहाँ भोजन करे तो बड़ा अनुग्रह हो। कदाचित् दिल्लगी के ढग पर यह भी उसमे लिख दिया था कि कृपा कर ठीक समय पर आने का यत्न कीजियेगा। खैर, कारण पीछे लिखैंगे पर पहुँचने मे तो हमको देर हो ही गई थी। हमे पीछे से मालूम हुआ कि इसमे हमारे मित्र की बड़ी हानि हुई। हमारे यहाँ ठाकुर जी का भोग लगता है तो घटी बजती है उन लोगो के यहा भोजन के समय बुलाने को घटी बजती है कदाचित इसका यही मतलब है कि अगर आप समय से पहुँच गये तो कुरसी खाली होगी यदि आपको देर हो गई तो सचमुच आपके लिये घंटा ही है और जिन पैरो गये थे उन्ही पैरों लौटना पड़ेगा। यह सब तब होता है जब अधिक लोग की भीड़भाड़ और जमघट होता है किन्तु हमारा निमत्रण तो मित्र जी ने अकेले ही का किया था इससे हमको ऊपर लिखी हुई खातिरदारी की पेचीदगी न भुगतना पड़ा पर हाँ शुरू से सब हाल आपको सुनावे।

यह तो सब जान ही गये कि यह मकान जहाँ मित्र जी रहते थे शहर से इतनी दूर है कि रोज आदमियो को कौन कहै शायद रात को चोर को भी उधर कभी मुँह करने का हौसिला न होता होगा। इसलिए यह एक फाइदा अङ्गरेजी बंगला किराये लेने का तो अवश्य मानना पड़ता है जब यह हाल है तो बस-

लाइये इतनी दूर पैदल चलने का ख्याल कौन करेगा। गाड़ी घोड़ा सात पुरुखों में भी हमारे यहाँ कभी किसी जन्म न था अब रही केराये की गाड़ी सो दरियाफ्त किया तो पहले उसने यह पूछा आप वहाँ कितनी देर ठहरेंगे। हमने समझा मित्र के यहाँ जाते है न जाने बातचीत गपशप मे कितनी देर हो इस लिये तीन या चार घण्टे का वादा उससे किया पर चार घण्टे का उसने चार रुपये कहा। चार रुपये का नाम सुनते ही जाड़ा-सा लग आया कान खड़े हो गये चट्ट किराये का एक्का कर रवाना हुये और किसी तरह वहाँ पहुँचे। एक्के किस तेजी और आसानी से चलते हैं यह भी आप खूब समझते होंगे। अब अँधेरा भी हो गया था वहाँ से निराले सूनसान दृश्य का हाल न पूछिये ऐसी सूनी अकेली जगह मे रहने को लोग जो समझते हों चाहे जो कुछ तारीफ उसकी करै पर हमको तो ऐसा मालूम हुआ कि यदि हमको वहाँ एक अठवारा रहना पड़े तो खासा पागलपन नहीं तो खफाकान हो जाने मे कुछ शक ही न रहे और बरैलोही के सदर मकान की सैर करना पडे। अब अँधियारे में भूल यह हुई कि जिस दरवाजे से हमको जाना था उसको छोड़ बगले के न जाने किस ओर जा निकले। अगर गाड़ी पर आये होते तो ठीक दरवाजे पर जा लगते पर हमने बेवकूफी यह किया कि बंगला थोड़ी दूर रह गया तो एक्के पर से कूद कंपौड में पहुँच अपनी कुदरती बाइसिकिल अर्थात् इन दोनो पैरो की जोड़ी को हाँक दिया और न जाने कहाँ जा निकले इसी से यह गलती हुई। खयाल कीजिये अगर हिन्दुस्तानी किते का मकान हो तो पता भी लगे कि यह सदर दरवाजे है। इन अङ्गरेजी बंगलो में जिधर देखिये दरवाजे ही दरवाजे मकान क्या शहद की मक्खियों का छत्ता है। खैर गिरते-पड़ते गए दरवाजे में घुसी तो पड़े। ऐ है! यह तो बाबरचीखाना था जहाँ काले-काले

शेख लट्टूदार पगड़ी बाँधे किसी खास तरह की गोश्त पकाने के मसाले तय कर रहे थे। अधचुरी माँस में प्याज और लहसुन की बघार की बू ने दिमाग को परागंदा कर डाला। उबाले हुये अंडों का पीला-पीला अर्क चीनी के प्याले में रक्खा देख मेरा ऐसा जी मिचलाना कि बड़े मुशकिलो मे अपने को सम्हाल सका। खुली हुई आलमारी में नीमविरियाँ मिरचा और नोन भुहराई किसी जानवर की राँद रक्खी हुई थी जिसे देख जी ऐसा भड़का कि घण्टो तक काबू में न रहा। मन में सोचने लगा पुराने कवियो के समय अङ्गरेजी देश में न व्यापी थी नहीं तो भवभूति आदि कवि वीभत्सरस के उदाहरण में जहाँ श्मशान और व्रण आदि रक्खे है वहाँ अङ्गरेजी बावरचीखाना भी अवश्य रखते। खैर, उन्हीं लट्टूदार वालों से पूछपाछ करने से मालूम हुआ कि कोठी दूसरी ओर है। बाहर निकले तो जाना कि जिस फाटक से आना चाहिये था उससे न आये इसलिये इतना भ्रम में पड़े और बेजगह जा लगे। खैर, उधरही को मुड़े एक आदमी उधर से आता था उससे पूछा कि किधर जाँय? उसने कहा मै तौ दर्ज़ी हूँ साँझ हुई काम से फुरसत पाय घर को जाता हूँ यह कह चल दिया। हमने समझा साहब लोगों की कोठी में बँधा हुआ कारखाना रहता है जो काम जिसके सिपुर्द हो वही करे दूसरा कोई उस काम की ओर आँख उठाके देखे तो दोनो आँखें निकाल ली जाँय इसलिये मियाँ दर्जी का शायद यह मनशा नहीं था कि बतला दें कि दरवाजा किधर है। आगे बढ़े तो एक दूसरे आदमी बुजुर्ग से मुकत्ता डाढ़ी लिये अंगा पायजामा पहने निकले। उससे चाहा कि कुछ पूछै पर वह ऐसी तेजी के साथ उसी बाबरचीखाने में घुस गया कि हम हक्का-पक्का से खड़ेही रह गये कुछ कहते न बन पड़ा। अब हम इस खोज में हुये कि पहले उस आदमी को ढूढ़ैं जिससे कुछ पूछ सकैं कि

सरकार साहब किधर हैं। अस्तु हमने मन में यही सोचा आओ बंगले के चारो ओर प्रदक्षिणा कर आवें आप ही पता लग जायगा। हनूमान् जी ने कदाचित् इतने अचरज के साथ लंका की परिक्रमा न किया होगा जैसा हमने किया और बीच-बीच यह मंत्र भी पढ़ते जाते थे।

यानि कानि च पुण्यानि अश्वमेधार्जितानि च।
तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिणा पदे पदे॥

घूमते-घूमते दूर से देखा कि पंखा चल रहा है एक लैंप टेबुल पर रक्खा हुआ झिलमिला रहा है औ हमारे दोस्त साहब जाकेट पतलून कसे कुर्सी पर बैठे हैं। उस समय हमारे मन में आया कि जहाँ कोठी और अङ्गरेजी बज़ा रखने में और बहुत से मजे है वहाँ एक यह भी है कि गर्मी से गर्मी के मौसिम में भी डबलजीन का कोट और पतलून लादे रहना पड़ता है और यह भी मन में तर्कना उठी कि जो लोग बंगलों में रहते है और साहब बहादुर बनने का दम भरते हैं उनमें ठंडे मुल्क की तासीर भी आ जाती होगी। पर ये सब बाते इतनी वैज्ञानिक हैं कि बिला साएंस पढ़े हमारी तथा आप की क्षुद्र-बुद्धि में आने योग्य नही है। इसलिये इस पर अधिक विचार और ऊहापोह करना व्यर्थ है। ज्योंही हमने भीतर जाने का मन किया त्योंही दो बड़े-बड़े कुत्तों ने आय दामन पकड़ा! कदाचित् इन कुत्तों का यह मतलब था कि वे दरियाफ़्त किया चाहते थे कि तुम्हारे पास कार्ड है या नही क्योकि सामने से एक लट्टदार वाले आय प्रगट हुये तो उन्होंने भी यही पूछा जिसकी पोशाक देख मैं अचरज में आया और सोचने लगा अङगरेज़ी नौकर भी हम से अधिक ठाठ से रहते है। अब कार्ड की कुछ टिप्पणी करें तो आपके समझ में आवे कि यह क्या वस्तु है। यह वह चीज है कि आदमी जब दूसरे की मुलाकात को जाता है तब उसके

पास उसे भेजता है जिसमें भेजनेवाले का नाम छपा रहता है। पर जैसा कि हमको ऐसी बड़ी इज्ज़त और प्रतिष्ठा बढ़ाने वाले मुकाम किसी पार्टी या बाल में जाने का कभी इत्तिफाक नहीं हुआ था इसलिये अगरेजी तर्ज की मुलाकात का यह औजार हमारे पास न था। कभी नाम तक इसका न सुना था केवल इतना जानते थे कि कार्ड के माने है खेलने का ताश या चिट्ठी लिखने का पोस्टकार्ड भी चल निकला है। अब अलबत्ता इरादा है कि कल ही पाँच सौ कार्ड छपवा डालें और जिसके यहाँ जाया करें उसके हाथ में पहले कार्ड थबा तब बातचीत शुरू करें।

महाजनो येन गतः स पन्था

बड़े लोग जिस रास्ते से चलें उसी रास्ते पर खुद भी चलें। खैर, हमने उस खानसामा से कहा (शायद खानसामा इन लोगों का नाम इसलिये पड़ा है खाने का सामान करते हैं) कार्ड तो हमारे पास नही है। तब उसने कहा फिर कैसे आपके आने की इत्तिला की जाय। हम हमेशा से तेज तबियत के लिये मशहूर हैं जल्द मैने अपनी छड़ी दै दी और कहा इसको ले जाओ और अपने सरकार से कहो जिनको आपने यह छडी दी थी वही आये हैं और उनको आपने आज शाम को बलाया भी है। पहले तो वह हिचकिचाया बाद कुछ सोचसाच ले गया। हाल सुनते ही हमारे मित्र जी खुद चले आये और खानसामा को हमें रोकने के लिये बहुतसा घोटा हाथ पकड़ हमें भीतर ले गये। अब मित्र से जो हमसे बातचीत हुई और जिस ढंग पर वे हमसे पेश आये उसे हम फिर कभी को आपको सुनावेंगे।

मार्च १८८६

(२९) हाकिम और उनकी हिकमत

जैसे प्रकृति के अधिष्ठान बिना सांख्यदर्शन वालों का पुरुष जड़ निश्चेष्ट और बेकाम है वैसे ही सर्वशक्तिमान हे हाकिम! तुम अपनी हिकमत अमली के अधिष्ठान के बिना सामर्थि शून्य हो। तुम हमारी महाराणी के प्रतिनिधि स्वरूप हो! २८ करोड़ मनुष्यों का बनना बिगड़ना आप ही के हाथ में रख दिया गया है। तुम विचारपति हो! कचहरियों में ऊँचे आसन पर सुशोभित हो हंस के समान इन्साफ करने में दूध का दूध पानी का पानी कर देने में समर्थ होकर भी जो अपने प्रकृति के गुण हिकमत के परवश हो अपनी जाति वालों का तथा शासन प्रणाली में अपने देश का विशेष पक्षपात करते हो सो केवल कवि की इस उक्ति की सार्थकता के लिये।

'भवन्ति साम्येपि निविष्टचेतसां वपुर्विशेषेष्वति गौरवाः क्रियाः'

हे महाप्रभो! आप हमारे देश के शतरञ्ज वाले राजाओं में नहीं हो किंतु सबों को आक्रमण किये मेरु और हिमालय से भी अधिक उच्चतर हो।

'स्थितः सर्वोन्नतेनोर्वीं क्रान्त्वा मेरुरिवास्थितः'

हे शुभंयो आप राजराजेश्वरी के महापार्षद हो! खां बहादुर रायबहादुर आदि उपाधि आपकी सेवा परिचर्या का सद्यः फल और आप की हिकमत अमलो का परिणाम है। हे सकल सामन्त चक्रवर्त्तिन्! अनेक दोष दूषित भी आपकी कारगुजारी को क्या ताकत कोई दूष सके। आपके प्रबंध को बुरा कहना गवर्न-

मेण्ट का विरोधी हो जाना है। हे सर्वव्यापिन्! आपका महाविराट वैभव पायोनियर का हजार मुख से हमे चाहे सो कह डालें हमारे दोषो को सहस्त्र नेत्र से निरखा करें कोई हर्ज की बातनहीं क्योकि वे सभ्य समाज के अग्रणी और सभ्यताप्रचारक परमाचार्य हैं। किंतु हम लोगो के मुख से यदि कुछ निकल जाय चाहे वह वास्तव में सच भी हो 'सेडिशन' और प्रजा के मन में विद्रोह उभाड़ने वाला है। हे महाभाग तुम प्रत्यक्ष देवता हो देवगण जैसा देवाङ्गणाओं को साथ लिये स्वच्छन्द क्रीड़ाविहार किया करते हैं वैसा ही तुम भी प्रजा का धन और प्राण अपनी मूठी में कर विमान सदृश स्वच्छ फिटिन पर लेडियो को अपने पास बैठाये विमल गगनपथ समान ठंडी सड़कों में स्वच्छ समीर का सेवन करते हुये विचरते हो। देवगण अजर होने के कारण बाल्य यौवन और प्रौढ इन्हीं तीन पन में सदा रहते हैं अर्थात् बुढापा उन पर कभी व्यापता ही नही वैसा ही तुम भी कभी बूढ़े नही होते क्योकि ५५ साल के ऊपर सर्कारी नौकरी से बरतरफ कर देने वाला कानून बहुधा तुम्हारे लिये नहीं देखते। यद्यपि आप हम लोगो के समान जो मनुष्य कोटि में हैं अल्पज्ञ मूढ़ मन्दमति होकर सरकारी नौकरी का काम नही आरम्भ कर देते किन्तु लियाकत और सब तरह की योग्यता के पुतले बनकर बिलाइत से आते हो तो भी बीच-बीच अपने अधिकृत कामों में ऐसी अनभिज्ञता और बाल्यभाव जो प्रगट कर उठते हो कि पाँच वर्ष का बालक भी ऐसा न करेगा सो यह सब आपकी क्रीड़ा और लीलाविलास है। जिस लीलाविलास की पुण्य कथा और पवित्र चरित्र का सब हाल हम लोग समाचारपत्रों में पढ़ अपने भाग्य सराहते हैं और अपने को धन्य और कृतकृत्य मानते है। जिसके द्वारा पुण्य श्लोक सङ्कीर्त्तन समान हमारे जन्म जन्म के अघ ओघ सब बिलाय जाते हैं। हे पेन्टलूनाम्बर!

यौवन और पेन्शनर बन जाने से समय को प्रौढ़ दशा समझ तुम्हे त्रिदश अर्थात् तीन दशा वाला यह नाम देना बहुत ठीक है।

"अमरानिर्जरा देवा त्रिदशा विबुधास्सुराः"

हे प्राड्विवाक्! साहब नामधारी साधारण हाकिमों में तुम त्रिदशेश अर्थात् देवराज इन्द्र हो। कचहरी तुम्हारा स्वर्गराज्य है। चेयर तुम्हारा स्वर्गसिंहासन है और पेशकार तुम्हारी शची देवी इन्द्राणी हैं। जैसे एक इन्द्र के बदल जाने से शचीदेवी और स्वर्गसिंहासन की बदली नही होती वैसे ही तुम्हारे साथ तुम्हारे परमभक्त पेशकार का परिवर्तन नहीं होता। तुम सोलहो कला पूर्ण साक्षात् चन्द्रमा हो। अमलावर्ग जिनके मध्य में तुम विराजमान हो वे सब तुम्हारी महिषी स्वरूप तारागण हैं। चंद्रमा जैसा असंख्य तारापति होने पर भी रोहिणी के विशेष वशीभूत रहता है वैसा ही तुम भी अनेक अमलों के रहते भी शरिस्तेदार के विशेष वशीभूत रहते हो और शरिस्तेदार जो कही मुसलमान हुए तो मानो पूरा जोड़ बैठ गया। चन्द्रमा को कभी-कभी मेघ आकर ढाँप लेते हैं तुम्हारे लिए वह मेघ कोई तेज वकील या बैरिस्टर हैं।

हे महामहिम; हाथी के दिखाने वाले दाँत की भाँति फ्रीट्रेड आपकी गूढ पालिसी के मर्म को कौन थहा सकता है। आपके हुकुम एहकाम आईन कानून जिनमें आपकी हिकमत भरा हुई है इङ्गलैण्ड ऐसे सभ्य देश के लिये सब तरह पर उपयुक्त है इण्डिया के सीधे सादे सरल मनुष्यों के लिए असह हो जाती है। तस्मात् हे सौम्यदर्शन! यदि आप हम लोगो के साथ माता के समान वत्सलता का भाव धारण कर हम लोगों का शासन करते तो हम सब भाँत सुखी रहते। हे सर्वोत्कृष्ट! ब्रिटिश शासन संसार के जितने

राज्य हैं सबों में उदार और संसार में जितने जाति के लोग हैं उनमें तुम्हारी कौम सबो में उदार प्रसिद्ध है वह उदारभाव हम लोगों के प्रति जो आप जी खोल कर नहीं प्रगट करते यह केवल आपकी हिकमत का दोष है ।

हे अणोरणीयान् महतो महीयान् ! आप अपनी शोषकता शक्ति कुछ कम कर मृदुता धारण करते तो हम सर्वोच्छेदन से बचे रहते और फल सम्पत्ति से बदले मे आप ही को और भी बढ़ाते ।

"अभिवर्षति योऽनुपालयन् ! विधिवीजानि विवेकवारिणा ।
स सदाफलशालिनीं क्रिया शरदं लोक इवाधिनिष्ठति"

जो मनुष्य प्रभुशक्ति सम्पन्न हो बिवेक के जल से सींच अपने प्रबन्धरूप बीज को बढ़ाता रहता है वह नीतिनिधान शरत्काल के समान समय से उसका पूरा फल पाने का अधिकारी होता है । नितान्त अबोध हम आपकी निसर्ग दुर्बोध हिकमत असली को क्या समझ सकते यह आप ही की कृपा है जो आपके द्वारा वितरित शिक्षा से नेत्रोन्मिलन पाकर कुछ-कुछ अब आपकी पालिसी के ढंग को समझने लगे हैं ।

"निसर्गदुर्बोधमबोधविक्लवाः क्व भूपतीनां चरितं क्व जन्तवः ।
तवानुभावोयमवेदियमन्या निगूढतत्वं नयवर्त्मभूभृताम्" ॥

हे सर्वशक्तिमान् ! हम लोग सर्वतोभावेन आप ही के आश्रित है अनन्यशरण है हमें बढ़ाओगे तो इसमें आप ही की बडाई है नहीं जैसा आपकी इच्छा और रुचि। हम लोगों का कपोतव्रत है ।

"मुखसो आह न भाखि है निज सुख करो हलाल"

हे अमेय अगम्य ! आपके नामरूप गुण कर्म को आदि से अन्त तक कहने को कौन समर्थ है आपकी स्तुति के समान जो यहाँ कहा गया उसमें जो कुछ अनर्गल हो गया हो तत् क्षम्यतां क्षम्यतां क्षम्यताम् ।

मई १८९२

(३०) पञ्च महाराज और मिडिल क्लास परीक्षा

पञ्च महाराज जिन्हें प्रपञ्चात्मक इस जगत के परपञ्च से ही केवल प्रयोजन रहता है एक दिन घूमते-घूमते किसी स्कूल की ओर झुक पड़े। जाकर देखा तो यह मिडिल क्लास की परीक्षा वृत्तिकर्षित इस दरिद्र देश में बबूल वृक्ष के समान कण्टकित और कठोर हो रही है। जैसे बबूल की डालियाँ और काँटें खेतों और फलन्त वृक्षों के रूँधने के काम में आते हैं वैसे ही यह मिडिल क्लास परीक्षा रुपिणी बबूलिका अच्छे-अच्छे गुण गौरव के फलों से लदे हुये वृक्षों की वृद्धि और विद्याक्षेत्रों के अवरोध की उपयोगिनी बन रही है। पञ्च महाराज के मन में आया कि बबूल वृक्ष तो केवल काष्ठ मात्र से कठोर और कण्टक मात्र से दुखदायी समझा जाता है पर यह नया बबूल वृक्ष कई तरह से कठोर और भयङ्कर है।

सच है लोभी के गाँव में लबार उपास नहीं करता इस लोकोक्ति के अनुसार मूर्खताङ्कुर धारिणी विद्योदय विदारिणी इस बबूलिका का प्रचार कुटिल नीति की दुन्दुभी के द्वारा होते ही देखा तो छोटे बड़े सब के सब झुण्ड के झुण्ड उठ धाये जो पुरुषोत्तम और बदरिकाश्रम के यात्री थे वे भी तीर्थयात्रा की राह छोड़ डफालियों का झकझकी बाजा सुन गाजी मियाँ के रौजे की ओर झुक पड़े। पर वहाँ क्या रखा था मुजावरो की बन पड़ी लम्बरवार या दर्जे बन्दी के अनुसार लगे फातिहा पढ़ने और यात्री बेचारे से वर्षोड़ी नेगकी भाँत फीस चुकाय कान पकड़-पकड़ उन्हें बाहर निकालने और कहा अब रफूचक्कर हो दूसरे साल फिर

इन्हीं दिनों मियाँ के दरबार में हाजिर होना। घुणाक्षर न्याय से अटकलपच्चू किसी का तीर लग गया तो मुजावरों को दृष्टान्त मिल गया कि देखो मियाँ के दरबार में आने और मुजावरों की शिफारिश से फलाँ फलाँ आदमी अपनी मुराद को पहुँच गये। बस इसी प्रकार जो लोग दसवें क्लास से चल कर दूसरे क्लास तक क्रम से इस आशा पर जाते थे कि इंट्रेंस में हमारी यात्रा सफल हो जायगी सो भी उतावले बन दसवें से लेकर चौथे तक कच्चे पक्के भूखे प्यासे गिरते पड़ते मलीदा रेवड़ी लेकर ऐसी दौड़ से दौड़े कि धमा धम हज़रत मिडिल के कबरिस्तान में पहुँच ही तो गये। क्या कहना है तीन-तीन रुपये का चमचमाता बारनिशदार बूट पहन और दो दो रुपये की पेटारीदार या किश्तीदार टोपी सिर पर रखे ऐसे उत्साह से पहुँचे कि मानों पोते का व्याह है अथवा विश्व-विजय का अभिषेक समारोह है।

खैर, जो कुछ बन पड़ता लिखा लिखाया बूझा बुझाया जब पहेलियों की लाल बुझक्कड़ी और सवाल का जवाब बड़े पीर और उस्तादों के पंजे में आया तब एक ठीक तो ग्यारह फिस्स दो ठीक तो बाईस फिस्स तीन ठीक तो तैंतीस फिस्स बस इसी तरह फिस्स का ढेर जमा होने लगा। यार लोग भी ताड़े बैठे हैं बच्चा अब तो तुम पञ्च पीरों के पैरों के नीचे आ ही गये हो जहाँ तक ढूंढ़े खोजे मलीदा रेवड़ी का दाम मिल सकेगा लाय झंडे के नीचे ज़रूर ही रखोगे काट फाँस की कुटिलाई में न चूके यहाँ हलुआ रोटी से काम मुर्दा चाहे दोजख में गिरै या विहिश्त में पहुँचे। नीचे के सात दरजों में जल्द पहुँचने की लालच से बिगड़ भी गये तो कुछ परवाह नही चढ़ा दिये गये पर यहाँ प्रपंच-कारिणी धन और उत्साह संहारिणी मिडिल परीक्षा के खोह में जो गिरा वह निनानबे के फेर में पड़ गया। काहे को मुजावरों को उनकी चमत्कारी मुँह माँगो मुराद पाने लायक कहो मैं

सकती है। कायर हुये तो भाग निकले लज्जावान हुये शरमा शरमी ऊपर के दर्जों की भी मोह छोड़ उसी कुण्ड में बार-बार गोता खाया किये और जब बार-बार की बुड़की में भी निरा घोघा हाथ आया तो बस निरे घोघा बसन्त बन बैठे।

'दोनों दीन से गये पाँड़े न रहे हलुआ रहे माडं'

यह सब देख चल पञ्च महाराज के जी में आया कि विद्या रसिक समझदार लोग क्यो इसमें पडें हैं उन्हें चाहिये इंट्रेंस की आशा से पढ़ते जाँय और अपनी लियाकत बढ़ाने में शिथिल न हों धोखे की टट्टी इस मिडिल की आशा को बिल्कुल छोड़ दे। अगर इन्ट्रेंस में पास हो जायगे तो सोना और सुगन्धि है नही तो विद्या की प्राप्ति और लियाकत का बढाना तो कही गया ही नहीं हर साल पाँच रुपये या आठ रुपये सालाना (सर्व स्वाहा) से बचे रहना क्या कोई छोटी बात है। कहाँ तक इस दुरन्तराल खोह में घर की रही सही पूँजी हमारे समझदार लोग फेकते रहेगे। निस्सन्देह जो यात्री देव दर्शन की बाट छोड़ इस रौजे की तरफ झुकते है वे केवल भेड़ियाधसान का व्याकरण सीखे है। गाजीमियाँ या दूसरे कोई आमिल कामिल का नाम ही नाम है जहाँ देखो वहाँ मुजावरों की मौज है यह सब सोच विचार पञ्च महाराज वहाँ से चल दिये।

जुलाई १८६१

(३१) हमारी गुदड़ी के लाल

यूरोप के नौजवानो से जब हम अपने यहाँ के नवयुवकों को मिलाते है तो उनमे और इनमें बड़ा अन्तर देखने में आता है। यूरोप में कोई ऐसी बात नही है जो आगे बढने से इन्हे रोक सके बल्कि हर एक बात सामाजिक मजहबी तथा घरेलू 'डोमेस्टिक' सब इस ढङ्ग से रक्खी गई है कि उनको अपने लिये तरक्की करने मे बाधा डालना कैसा बल्कि हर तरह का आराम पहुँचाती है। और इतनी आशाइसे उनके लिये रक्खी गई है कि ऐसी हालत मे हो जब इन्होने कुछ किया तो उसकी कोई तारीफ नही, न करने की निन्दा अलबत्ता है। मुहल्ले मुहल्ले सस्ते से सस्ता स्कूल तथा मिसनरी हैं पाँच - सात वर्ष के हुये बाप माँ ने बिल्कुल उनकी मोह और ममता छोड बोर्डिङ्ग हाउस के सिपुर्द कर दिया। हमारे यहाँ का बारह और चौबीस वर्ष का ब्रह्मचर्य केवल किस्से कहानियो की भाँति भले ही सुना करिये किन्तु कर्तव्यता में वास्तविक ब्रह्मचर्य वही देखा जाता है कि जब तक किसी विषय के पूर्ण विद्वान न हो जाँयगे विद्याभ्यास की ओर से विमुख न होगे और न तब तक गृहस्थाश्रम के कामो में प्रवृत्त होगे। समाज तथा मजहब के पाबन्दी की कैद यहाँ तक कम है कि मोची का लड़का भी पादरी हो सकता है और पादरी के कुल मे जन्म लै बढई लुहार या मोची तक का काम करने मे शरम न मानेगा। पृथ्वी के किसी हिस्से मे जहाँ चाहे वहाँ जा सकते है न उनके मजहब में किसी तरह का फर्क आवेगा न जातपाँत बिगड़ैगी। बाल्य-विवाह की कौन कहे पूरी जवानी पर पहुँचकर भी जबरदस्ती

ब्याह देने में बाप माँ का कुछ अख्तियार नहीं न किसी तरह का कैद। जिस किसी को गृहस्थी करने की इच्छा हो ब्याह कर बन्धन में पड़े नहीं जन्म भर स्वच्छन्द रहे। हमारे यहाँ एक ही सनकादि तथा भीष्म सरीखे दो एक हुए जिनके आबाल ब्रह्मचर्य का गुण अब तक हम गा रहे हैं और यहाँ तक उनकी इज्जत करते है कि नित्य के तर्पण में उन्हें भरती कर रक्खा है। वहाँ ऐसे ऐसे हजारों निकलेंगे जो दारपरिग्रह से विमुख रह ऐसे ऐसे अद्भुत काम अपने देश तथा जाति की भलाई के कर गये और करते जाते है कि हमारे देश में होते तो अवश्य देवांश या अवतार माने जाते। अस्तु,

अब दूसरी ओर चलिये, पाँच छः वर्ष तक तो कुछ बात ही नही है टोना टन-मन की डर से लड़के घर के बाहर ही नहीं निकलने पाते। प्रायः सम्प्रदाय के अनुसार पाँचवे वर्ष मुण्डन होने बाद जब झालर न रहे तब लड़का इस लायक समझा गया कि अब बाहर निकलने बैठने में टोना टनमन का भय न रहा। इसके पहले उसे निरा 'नारी कवच' होकर रहना पड़ता है। अनपढ़ी माँ और मूर्ख स्त्रियों के बीच रहकर जैसे जैसे बोलचाल और जैसी जैसी आदतें सीखा करता है कि उसकी प्रशंसा ही नहीं करते बनता। उपरान्त स्कूल में भेजना और तालीम की फिकिर बाप माँ को पीछे होती है ब्याह पहले ही कर दिया जाता है दूसरे 'ज्वाइण्ट फेमिली' कुल कुटुम्ब का एक ही घराने, में रहकर एकत्र भोजन ऐसी भारी विपत्ति है जिसे हम बाल्य विवाह से किसी अंश में कम न कहेंगे। यह और भी नवजवानों को उभड़ने नहीं देती। इस बेचारे ने बहुत कुछ जोर मार कर भी अपने घराने की इज्जत बात और बना रक्खा मानों बड़ा काम किया घर का दीपक और सपूत कहलाया। हिन्दुस्तान से विलाइत का 'डिफिनिशन' ही

सपूती का बिल्कुल निराला है। बिलाइत में जिसने केवल अपना पेट पाल लिया अथवा अपने कुल या घराने की प्रतिष्ठा बना रक्खा वह एक सामान्य मनुष्य कहलावेगा सपूती के दफ्तर में उसका नाम तभी दर्ज किया जायगा जब इसने अपने देश या जाति की भलाई का कुछ काम किया हो। जिसके लिये शुरू से ही यह तैयार किया जाता है और हर तरह पर इसे इस काम के लिये मौका दिया जाता है। एकान्न भोजन की कुप्रथा न जाने क्यों हमारे यहाँ चल पड़ी है। मनु तथा दूसरे धर्म्मशास्त्र प्रवर्तक ऋषियों ने एक पिता के जितने पुत्र सबों का पृथक पाक इसलिये लिख दिया है कि जिसमें सब पिण्डदान और श्राद्ध के अधिकारी हों नहीं तो केवल जेठा मात्र श्राद्ध आदि पैतृक कर्म का अधिकारी रहता। मै समझता हूँ बाल्य-विवाह की अशास्त्रोक्त कुप्रथा और पुत्रों का अवश्य व्याह देना बाप का अपना कर्तव्य कर्म समझने का कुसंस्कार पृथक पाक का मूलोच्छेदी कुठार हुआ। हम पिष्टपेषण की भाँति न जाने कै बार लिख चुके कि यह बाल्यविवाह हमारी यावत् अवनति का कारण है और जब तक इस बुराई को पाले रहेंगे तब तक हम हजार हजार तद्बीर आगे बढ़ने की करें कभी कृतकार्य न होगे।

हमारे नवयुवकों की तो इससे बड़ी ही हानि हो रही है सिवा इसके पग पग में धर्मच्युत होना और जात पाँत का बन्धन उनके नये उत्साह और नये हौसिलों पर पुराने लोगों की तानाजनी और विरोध, गवर्नमेण्ट कर्मचारियों का उनकी ओर बुरा ख्याल और उनकी उमदा तालीम रोक देने को हर तरह की कड़ाई आदि राजकीय सामाजिक तथा धर्म संबंधी पर्वत समान बड़े-बड़े विघ्नों को नाँघ - डाँक जो वे दिन - दिन तरक्की कर रहे हैं यहाँ तक कि बाजे - बाजे यूरोपियन युवकों को कम्पीटी-शन में अपने नीचे गिरा देते है। जिनके लिए उतनी ही

ही आशाइस और सुभीता आगे बढ़ने का है जितना हमारे अनुपपन्न गरीब नौजवानो को हर तरह की कठिनाई और सख्ती है ।

हम पहले ही लिख आये हैं बाप मा पहले व्याह की फिक्र कर तब लड़कों को स्कूल भेजते है। स्कूल या कालेज से निकलते ही पूरा सामान गृहस्थी का मौजूद रहता है। लड़की, लड़के, बाप, माँ, स्त्री के भरण-पोषण की फिकिर, उधर एकान्त में सपरिवार मिलकर रहने की बुरी चाल इधर हिन्दुस्तानी पुराने कायदो की पाबन्दी जिसमे जरा सा स्वच्छन्दता और आजादगी को दखल दिया गया कि बदनामी और समाज तथा भाई बिरादरी में हेठी होते देर नही लगती। सब दु.ख एक ओर और यह एक ओर कि पढ लिख सुशिक्षित अनेक विद्यापारङ्गत तत्वदर्शी होकर भो उन्ही अपढ दुराग्रही मूर्ख पुराने खूसट बुड्ढो के राय की पाबन्दी और उनकी हाँ में हाँ मिलाना पड़ता है। नितान्त व्यर्थ बहुत से सामाजिक बन्धन से ऐसे जकड़े हुए है कि जिनकी बुनियाद न कही हिन्दू धर्म के किसी ग्रन्थो में है, न उनसे किसी तरह के दीनी या बुनियादी फायदे हैं, पर चलन चल पड़ी है इसलिये लाचार हो उन्हे मानना ही पड़ता है। पूरे बारह वर्ष स्कूल और कालेजो में नित्य की हाजिरी से बड़ी से बड़ी डिगरी हासिल कर बुद्धि सागर बन बैठना एक ओर और घर की पुरखिन पुरानी बुढ़ियाओ की अकिल एक ओर। तुमने अपनी अकिल का जौहर निकाल तालीम हिकमत और सुशिक्षा का सर्वस्व मथ कर एक नई बात निकाल ईजाद करना चाहा सत्तर बरस की डोकरी को नापसन्द आया नाक भौ सिकोड़ "चलमुये" कह डाँट बैठी तुम भीतर ही भीतर मसोस अपना सा मुँह लिए चुप हो बैठ रहे। तुम क्या तुम्हारे बड़े से बड़े प्रोफेसर साहब को भी कहाँ इतनी हिम्मत कि हमारी

पुरखिन बुढ़ियाओं से वादविवाद में पार पा सकें। इतने इतने विघ्नों की राशियों को चूरचूर कर और अपने नवाभ्युत्थान में बाधा डालने वाले कठिनाई के दुरूह पहाड़ों को तयकर जो नई उमंग और नया हौसला वाले हमारे नवयुवक आगे को बढ़ते ही जाते है यह क्या कोई थोड़ी बात है इसके लिये उनका जितना संभ्रम और जितनी तारीफ की जाय सब बहुत कम है। कौमकी तरक्की और देश का फिर से अभ्युत्थान सब इन्ही पर निर्भर है इसी से हम इन्हें गुदड़ी के लाल कहते है। ये भारत के अँधियारे घर के उजाला है। देश के दुष्कर्मों से रूठी हुई लक्ष्मी और सरस्वती को मनाय लाय फिर से संस्थापित करने के द्वार है इसलिये इनका सब नाज नखरा सह लेना चाहिये। दुधार गाय के दो लात भी भले होते है।

मई १८९१

(३२) कट्टर सूम की एक नकल

साहु खेमकरन (पंखा हाँकते हाँकते) हाय ! हाय ! मारे गरमी के फुँके जाते हैं (जीभ से होठ चाटते) प्यास ऐसी लगी है कि हलक सूखा जाता है (आकाश की ओर देख) इतना दिन चढ़ आया दस बजते होंगे अबहिन तक पण्डित जी नहीं आए घर से सन्देशा आया है कि आज बैशाख की पूनो है पितरन के नाम घट दान किए होइ है। भिखवा कहार को छदाम की ककरी लाने को चौक भेजा है वह भी न जानिए क्या करने लगा जो अब तक नहीं लौटा गृहस्थी महा जंजाल है, रोज उठकर एक न एक खर्च लगा ही रहता है, आज कुछ नहीं रहा यही जी की साँसत आ लगी दमड़ी का एक झञ्झर मँगाया है पाव सेर सत्तू आधा डब्बल दक्षिणा कहाँ तक पण्डित जी को न देना पड़ेगा तौ भी हमें लोग सूम कहते है। अभी एक लड़की का ब्याह कर चुके हैं दूसरी मुँह लगे जूफती है कहाँ तक किफायत करें। दो महीने से देखो धोती फटी है वही एक धोती में गुजारा करते हैं सिवाय सूखी रोटी के दमड़ी का घी जहर बराबर समझते हैं। तब तो निर्वाह होता है क्या करें रोजगार सब मारा ही पड़ा है जब से नोट चली हुडी पुर्जा को कोई पूछता ही नहीं धूर की रस्सी बट काम चलाते हैं तिस पर भी नही जमा बटुरती तो अब कहाँ तक कृपाणता करें।

(डाकखाने का एक चपरासी)

चप०—साहु जी, तुम्हारे नाम की बैरङ्ग चिट्ठी है दो आना पैसा दो और चिट्ठी लो।

खेम०—(चिट्ठी कई बार उलट पुलट देख मोहर बचाय लिफाफा खोलने लगा)

चप०—हाँ ! हाँ ! यह क्या करते हो ? बिना महसूल दिये चिट्ठी मत खोलो।

खेम—हाँ ! हाँ ! सबर करो, महसूल देंगे।

चप०—नहीं ! नहीं ! बिना महसूल दिये चिट्ठी खोलने का हुकुम सरकार से नहीं है।

खेम०—जरा सी चिट्ठी का दो आना महसूल। हमने ऐसी अन्धेर कभी नहीं सुना, कुछ सोना चाँदी तो इसमें हो हीगा नहीं, बिना सोचे समझे किसने यह नादानी का काम किया कि एक तो बैरंग चिट्ठी भेजा उसमे भी ऐसी भर कर दिया कि दो आना महसूल देना पड़ता है।

चप०—अच्छा तो न लो। लाइये, हम फेर देंगे।

खेम०—सुनो, हमारी तुम्हारी एतनी दिनों की जान पहचान क्यों जरा सी बात के लिये बे मुलाहिजे होते हो। खोलने दो, देखे इसमें क्या है ? जो कोई मतलब की होगी तो दो आने दें हीगे नहीं तो ऐसी हिकमत से वद कर देगे कि कोई न जान सकेगा।

चप०—न कोई जाने भगवान जो हमारे ईमान धर्म का साक्षी है वह तो जानता है।

खेम०—उः तुम भी उसको जानने के लिए बहुत सी बाते हैं वह सब बात कहाँ तक जान सकता है क्या यही बात उसको जानने के लिए है।

चप०—यह मत समझो कि वह कोई बात नही जानता तुम्हारे सिर में कितने बाल हैं यह वह गिने बैठा है। बिना उसकी मर्जी के पेड़ की एक पत्ती तो हिल सकती ही नहीं। फिर

और किस की कहैं। शायद इसमें किसी ने तुम्हारी नाम की कोई हुंडी भेजा हो ?

खेम०—भाई ! ऐसा कहाँ हमारा भाग्य ? जो किसी ने हुडी भेजा हाता तो क्या दो आने महसूल के देते उसे शरम आती थी।

चप०—शायद तुम्हारे लड़के की चिट्ठी हो। बहुत दिन उसे घर से गये बीत गया है।

खेम०—तो क्या वह यह नही जानता कि हमारे बाप के पास कहाँ से जमा आ गई। जो हम बैरग चिटठी भेजते हैं यह तो राजा बाबू से हो सकेगा कि दो आने चिट्ठी का महसूल दे हम कहाँ से पावें दो आने मे हमारी दो दिन रोटी चलेगी तुम ले जाओ हम न लेगे। (चिट्ठी लौटा देता है) (उसकी लडकी विनता अचानक वहाँ आ जाती है और उसे लौटते देख खेम करन से—)

विनता—बाप—यह चिट्ठी वाला क्यो लौटा जाता है ! क्या वह चिट्ठी तुम्हारे नाम की नहीं है।

खेम०—है तो पर महसूल के कहाँ से आवे ? विन० (स्वगत) हाय ऐसा बाप ! शत्रु को भी न मिले कदाचित यह चिट्ठी भैया के पास से न आई हो इसी के सूमपने से तग आकर आह घर छोड कर चला गया पर हम कहाँ जाय (प्रकाश) बाप ! तो महसूल हम दे देगी।

(चिट्ठी वाले को फिर बुलाती है और उससे चिट्ठी ले अपने भाई का हस्ताक्षर पहचान) यह अक्षर तो भैया के हैं (बाप से) हा ! धिक्कार है। केवल दो आना खर्च हो जाने के कारण अपने निज लड़के की चिट्ठी जिसका दस वर्ष से कुछ पता नहीं है कि कहाँ चला गया बपा ! तुम फेर तेदे हो

(चपरासी से) तुम हमारा विश्वास करो कल हम पैसा कहीं से कर रखैंगी तुम आकर ले जाना।

चप०—इसकी कुछ चिंता नही है पर इतना कहे देता हूँ कि फिर न फेरूँगा तुम्हारे विश्वास पर चिट्ठी छोड़े जाता हूँ नहीं यह डोकरा बड़ा कजाक है मै कभी न मानता (जाता है।)

खेम०—भला, तू पैसा कहाँ से पावेगी जो देगी महसूल। ऐसी फजूल खर्ची मे हमारा निबाह काहे को होगा।

विन०—मै पिसौनी कर पैसा दे दूँगी दो आना कौन बड़ी बात है तुम खातिर जमा रखो तुम्हे न देना पड़ैगा।

खेम०—बेटी यह आदत अच्छी नही है जो पैसा तुम मेहनत कर कमाओ वह हमे दे डाला करो तुम अभी जानती नही हो पैसा कैसा मेहनत से मिलता है दातो पसीना आ जाता है। खैर अबकी बार जो कुछ हुआ जो हुआ आइन्दा से चौकसी रक्खो कि ऐसी फिजूल खर्चियाँ न करो बेटी मै तुम्हारे ही फायदे के लिये कहता हूँ इन्ही बातो से मै तुम्हारे भाई से नाराज रहता था लो तुमने भी उसी राह पर कदम रखना शुरू किया। अच्छा तो पढो इस चिट्ठी को।

वि० (लिफाफा खोल पढने लगी) प्यारी बहिन! तुम्हें याद होगी कि दस वर्ष के लगभग हुए जिस समय मैं अपने बाप के सूमपने और किफायती मिजाज से तग आकर घर छोडा था तब मै यहाँ तक लाचार हो गया था कि मेरे तन में कपडा और पाँव मे जूती तक नही था और भीख माँगते-माँगते यहाँ बम्बई तक किसी तरह पहुँचा (विनता आँखों में आँसू भर सिसकती हुई आँसू पोछते पोछते स्वगत) हाय! ऐसे बाप से तो बे बाप का होना अच्छा जिसको अपने पेट के लड़के से भी रुपया अधिक प्यारा है।

खेम०—हाँ आगे पढ़ो।

वि०—मैने तो यहा समझा था कि सारा संसार मेरे बाप ही का सा है पर यह बात देखने में न आई बहुत से कितने निष्कारण मित्र और दयाशील पड़े हैं। पहिली ही मंजिल में आकर एक जमीदार के द्वारे पर टिक रहा जिसने मुझे अतिथि जान मेरी ऐसी खातिर किया कि मुझे ऐसा अच्छा भोजन कभी बाप के घर नही मिला था।

खेम० (स्वगत) अच्छा हुआ जो मैंने दो आने पैसे व्यर्थ नही गवाया।

बहन ! इस चिट्ठी से तुम यह मत समझो कि मुझे बाप से प्रेम और उनमे भक्ति नही है किन्तु ऐसी-ऐसी कड़ी बातें इसलिये लिखता हूँ कि इसे बाँच या सुन उनके जी पर कुछ तो असर होगा जिसमे उनका कठोर हृदय कोमलता ग्रहण करे और यह ख्याल जो उनके जी में समाना है कि संसार में जो कुछ सो रुपया है

'मर जैहों तोहि न भुजैहो'

इसे अलग करे। और, दूसरे दिन वहाँ से चल दिया राह में कोई दिन मुझे दिन और रात चलते ही बीतता था जङ्गल पहाड नाँघना डाँकना जब बहुत थक जाता था तब किसी पेड़ के नीचे सो रहता था। कभी मारे भूख के पेटाग्नि जब नहीं सह सकता था तब चोरी करने का जी चाहता था अन्त को किसी तरह लुढ़कते पुढ़कते यहाँ तक पहुँचा। कई दिनो तक यहाँ मैं धनियो के कई एक सदाबर्त है उनमें से अन्न माँग लाता था और रूखे अन्न से किसी तरह पेट भर रात को कही पड़ रहता था (विनता आँख मे आँसू भर स्वगत) हाय जिसके घर मे भगवान का दिया सब कुछ है उसकी ऐसी दशा हो।

खेम० (क्रोध से) बैठे बैठाए बलबाई सूझी हराम का खाना और गुर्राना। भला ! मालुम तो पड़ा कि कैसी मशक्कत से

खाने को मिलता है। बच्चा ने समझा था कि घर के बाहर चले जाने से कहीं खजाना रखा है खोद लावेंगे। विनता, यह पत्र तुम्हारे लिए एक शिक्षा है जो सम्हल कर न चलेगा उसकी यही दशा होगी। अच्छा, आगे पढ़ो।

बिन०—बस,, बस, बाप अब मुझसे नही पढ़ा जाता। क्या इससे तुम्हारे कठोर चित्त पर कुछ असर न हुआ ?

खेम०—असर कैसा ? यह उसी का फल है जो बे हने-घुने का खाने को मिलता था तो भी दूध-भात की परोसी थाली में लात मारा।

बिन०—बाप धिक्कार है ? ऐसे खाने को कि लहू पानी कर खाने को देते हो। कब तुमने उसे जूड़े जी खाने को दिया था। बिना फटकार किए न तुमने उसे कभी पेट भर खाने को दिया न कपड़ा। न ठंडे पेट कभी उससे मुँह भर बोले। (स्वगत) न जाने यह सब जमा किसके काम आवेगी। ऐसे बाप भए तो क्या न भए तो क्या ?

खेम०—बेटी, तुम समझती नही हो। लड़कई ही से बहुत खरच पात की बान जिसकी पड़ जाती है तो आगे चल कर भी उसकी वैसी ही आदत पड़ी रहती है तब वह आदमी आवारा हो जाता है। इससे बहुत खर्च करने की बान रखना अच्छा नहीं होता। सदा दबे हाथ खर्च किया करे। चार पैसे की जगह एक पैसा खर्च करे जो काम एक पैसा में होता हो उसे जहाँ तक हो सके तहाँ तक छदाम मे करे। गेहूँ की रोटी उर्द की दाल ठुकरा भर घी छोड़ कर क्या कोई मोती चुगता है। अब कैसे खाने को दिए होता है। हम कहाँ से पाते जो रोज उठ कर उसे दूध मलाई खिलाया करते, तुम देखती हो हम कैसे गरीब हैं, बनिज ब्योपार कुछ करते नहीं न हम से किसी तरह का काम काज

हो सके क्योंकि हम जौन ही काम करना विचारते है उसी में पहले कुछ खर्च देखते हैं। पीछे चाहे नफा भी हो।

विनता०—हाँ, हाँ हम जानती है जैसे गरीब तुम हो। बाप! तुम जी के दरिद्र अलबत्ता हो। हम दोना बडे प्रसन्न होते जो तुम गरीब रहते, फिर हम लोग काहे को गिल्ला करते। तन मन से तुम्हारी रखवाली और पालन-पोषण करते। बाप! निश्चय जानो तुम्हीं ने हमारे भाई को ऐसा उदचामा कि वह तुम्हारे कुलच्छन से घर मे न रहा।

खेम०—बडी वज्जात लडकी है। बाँच बाँच चिट्ठी, न तू बाँचे चशमा ला दे हम बाँच ले।

विनता०—(फिर चिट्ठी बाँचने लगी) प्यारी बहिन! कितने ऐसे अकारण मित्र दयावान मनुष्य पडे है जिनसे यह बसुधा ठौर-ठौर अलङ्कृता है। एक दिन एक बुड्ढा मुझे मिला। वह सब मेरा हाल पूँछ उसे कुछ दया आई तो एक पारसी सेठ की कोठी मे अपनी जमानत पर पन्द्रह रुपये महीने का मुझे नौकर रखवा दिया। उस समय मुझे ऐसा सुख हुआ मानो जैसे कोई अँधेरे मे पड़ा टटोलता फिरता हो एक बारगी रोशनी मिल जाने से सब उसे सूझने लगे। छ: ही महीने मे मैं अपनी दियानतदारी और कारगुजारी से सेठ की कोठी का खास मुनीम कर दिया गया। अब मुझे तीस रुपया महीना मिलता है और यह दो सौ रुपये जो मैने अपने मामूली खर्च से बचा रक्खा है हुण्डी करा तुम्हें भेजता हूँ इसमे से आधा बाप को देना आधा अपने पास रखना।

खेम०—(विस्मित हो) क्या! क्या! फिर तो इसे पढ़। दो सौ रुपया भेजा है। नहीं तो जा उस कोठरी में मेरा चशमा रक्खा है उठा ला हमी पढ़ें। दो सौ रुपये मे आधा तो मेरा हई है। आधा अपना हिस्सा भी मेरे

ास रख दे। तेरे पास रहेगा तो खर्च हो जायगा। तू मुझे ाहक को नाम रखती है। यह मेरे ही हरदम कोड़ा करने का फल है कि अब वह तीस रुपया महीना कमाने लायक हो गया। अच्छा, आगे पढ़।

विनता०—अपना रुपया हरगिज बाप को न देना। उनके म-पुचाड़े में आय दे डालोगी तो पछताओगी। बहन! हम ोग बड़े अभागे है कि माँ हमारे लड़कपन ही में सुरधाम ाधार गई। माँ जो जीती होती तो कहाँतक हम लोगों की ोह उन्हें न होती। खैर, पिता जी से हमारी सलाम कह देना ौर यह चिट्ठी उन्हे पढ़ कर सुना देना।

खेम०—(स्वगत) यह रुपया इससे किसी तरह ले लेना ाहिये। इसके हाथ में रुपया रहेगा तो यह बराबर खर्च करती हेगी। मुझसे इसकी शहखर्ची कैसे देखी जायगी। कोई जो ़दबीर सोचै कि किसी तरह इसके हाथ से यह रुपया निकल ावै। अभी तक यह मेरे अधीन थी। पास कुछ न रहने से मैं जस तरह इसे रखता था रहती थी। अब यह मन-मानता र्च करैगी। जो मेरा कुढ़ेगा क्या करूँ लाचारी है।

सूमड़े की यह एक नकल है। हमारे पढ़ने वाले इसे निरी कल्पना न समझै वरन् इस धरती के बड़े बोझ न जाने कितने से कदर्य इस संसार में पड़े है जिनको तन मन यह लोक पर लोक जो कुछ है सब रुपया है।

'मर जैहों तोहि न भुजैहों'

इस कहावत को चरितार्थ करते धौकनी के समान साँस लेते 'जीवन्नपि' मृतोपम' हैं।

जून १८९५